स्वाभिमानी

इवान तुर्गनेव

बुढ़ापा आ गया है, बीमार भी हूं और अब मेरे विचार अक्सर मृत्यु की ओर ही जाया करते हैं जो दिन-ब-दिन मेरे पास आ रही है। कदाचित् ही मैं भूतकाल के संबंध में सोचता हूं और शायद ही कभी मैंने अपनी आत्मा की आखों से अपने अतीत के जीवन की ओर मुड़कर देखा है। सिर्फ, समय-समय पर, जाड़े में जब मैं दहकती आग के सामने निश्चल भाव से बैठता हूं, या गर्मी में जब छायादार वृक्षों की पंक्ति के नीचे धीर-गति से टहला करता हूं तब मुझे अतीतकाल के दिन, घटनाएं और परिचित चेहरे याद आ जाते हैं, किन्तु ऐसे समय में भी मेरे विचार, मेरी जवानी या पकी उमर पर नहीं जाते, वे मुझे बचपन के प्रारम्भ की या छुटपन के शुरू के वर्षों की ही याद दिलाते हैं। मसलन मुझे उन दिनों की याद आ जाती है, जब मैं देहात में अपनी कठोर तथा गुस्सैल दादी के साथ रहा करता था, उस समय मेरी उम्र सिर्फ बारह साल की थी, और मेरी कल्पना के आगे दो मूर्तियां आकर खड़ी हो जाती हैं। किन्तु अब मैं अपनी कहानी का सिलसिले के साथ, ठीक-ठीक, वर्णन करूंगा।

1

1830

बूढ़ा नौकर फिलिप्पिच दबे पांव, जैसी कि उसकी आदत थी, गले में रूमाल बांधे वहां पहुंचा। उसके होंठ खूब कसकर दबे हुए थे, जिससे उसकी सांस की गंध महसूस न हो और पेशानी के ठीक बीच में सफेद रंग के बालों का गुच्छा पड़ा हुआ था। उसने अन्दर दाखिल होकर सलाम किया और मेरी दादी के हाथ में एक लम्बी चिट्ठी रख दी, जिस पर मुहर लगी हुई थी। मेरी दादी ने चश्मा उठाया और उस पत्र को शुरू से आखिर तक पढ़ डाला।

"क्या वह यहां मौजूद है? " मेरी दादी ने पूछा।

"जी, क्या फरमाया?" फिलिप्पिच ने दबी जबान में डरते-डरते पूछा।

"बेहूदे कहीं के! मैं पूछती हूं, जिस आदमी ने यह खत दिया है, क्या वह यहां मौजूद है?"

"जी, वह यही है। दीवान खाने में बैठा हुआ है।"

मेरी दादी ने माला के दाने खड़खड़ाते हुए कहा, "उसे मेरे पास आने को कहो।" और फिर मेरी ओर मुखातिब होकर बोलीं, "देखो, तुम यहीं चुपचाप बैठे रहना।"

मैं तो इस समय भी पहले की तरह ही एक कोने में तिपाई पर बिल्कुल चुपचाप बैठा हुआ था। मेरी दादी ने मुझ पर पूरी तौर से रौब जमा रखा था।

पांच मिनट के बाद कमरे में पैंतीस वर्ष की उमर का एक सांवला आदमी दाखिल हुआ। उसके बाल काले थे, गाल की हड्डियां चौड़ी थीं, चेहरे पर चेचक के दाग थे, नाक कुछ तिरछी और भौंहें घनी थीं, जिनके अन्दर से उसकी भूरे रंग की छोटी-छोटी उदास आंखें दीख पड़ती थीं। उसकी आंखों का रंग और उनकी अभिव्यक्ति उसके चेहरे की पूर्वी ढंग की बनावट से मेल नहीं खाती थी। वह एक भद्र व्यक्ति की भांति लम्बा कोट पहने हुए था। आते-आते वह दरवाजे पर ठिठक गया और सिर झुकाकर सलाम किया।

"तुम्हारा ही नाम बैबूरिन है?" मेरी दादी ने पूछा, और फिर मन-ही-मन कहने लगीं-देखने में तो आरमेनियन जैसा मालूम पड़ता है।

"जी हां", उस व्यक्ति ने गम्भीर और निश्चल स्वर में उत्तर दिया ।

मेरी दादी के कंठ-स्वर की पहली कड़कती आवाज पर उसकी भौंहें कुछ सिकुड़ सी गईं। कहीं उसने यह आशा तो नहीं की थी कि मेरी दादी उसे अपनी बराबरी का समझकर सम्बोधन करेंगीं ?

"क्या तुम रूस के रहने वाले हो और कट्टर धर्मावलम्बी हो?"

"जी हां।"

मेरी दादी ने अपनी आंखों से चश्मा उतारकर बैबूरिन को सिर से पांव तक गौर से देखा। उस व्यक्ति ने अपनी निगाह नीची नहीं की, सिर्फ अपने हाथ उसने अपनी पीठ की तरफ मोड़ लिए। मेरा ध्यान खासकर उसकी दाढ़ी की ओर गया जो खूब घुटी-मुड़ी थी। लेकिन उसके जैसे नीले गाल और ठोड़ी मैंने अपने जीवन में पहले कभी नहीं देखे थे।

"जेकोव पेट्रोविच ने", मेरी दादी बोलीं, "अपनी चिट्ठी में तुम्हारी जोरदार सिफारिश की है। लिखा है कि तुम बड़े गंभीर और परिश्रमी आदमी हो लेकिन यह तो कहो कि तुमने उसकी नौकरी क्यों छोड़ी?"

"उनकी? उन्हें अपनी जमीदारी के प्रबंध के लिए दूसरे ही ढंग के आदमी की जरूरत है।"

"दूसरे ढंग के आदमी की! मतलब?"

मेरी दादी फिर आनी माला फेरने लगीं, "जेकोव पेट्रोविच लिखता है कि तुममें दो-दो विशेषताएं हैं। वे क्या हैं?"

बैबूरिन ने अपने कंधे को धीरे से हिलाते हुए कहा, "मैं नहीं बता सकता कि मुझमें ऐसी कौन-सी बातें हैं, जिन्हें वह मेरी विशेषताएं कहना पसन्द करते हैं। शायद इसलिए कि मुझे.... शारीरिक दण्ड असह्य है।"

मेरी दादी को यह सुनकर आश्चर्य हुआ, "क्या तुम्हारे कहने का अभिप्राय यह है कि जेकोव पेट्रोविच तुम्हें कोड़े मारना चाहता था?"

बैबूरिन का काला चेहरा एकदम लाल हो आया, बोला, "श्रीमती जी, आपने मेरे कहने का मतलब ठीक नहीं समझा। मैंने यह नियम बना लिया है कि मैं किसानों के साथ शारीरिक दण्ड का प्रयोग नहीं करूंगा।"

मेरी दादी ने पहले से भी अधिक आश्चर्य में आकर अपने हाथों को ऊपर की ओर फैला दिया और फिर वह अपने सिर को एक तरफ कुछ झुकाकर और एक बार फिर गौर से बैबूरिन को देखती हुई बोलीं, "अच्छा, तुम्हारा यह नियम है! खैर, इससे हमें कोई सरोकार नहीं! हमें किसी ओवरसियर की जरूरत नहीं है। हमें तो चाहिए हिसाब रखने के लिए एक क्लर्क, सेक्रेटरी। तुम्हारी लिखावट कैसी है?"

"जी, मैं अच्छी तरह लिख लेता हूॅ, हिज्जे में कोई गलती नहीं होती।"

"इससे मुझे कोई मतलब नहीं। मेरे लिए सबसे जरूरी बात यह है कि लिखना साफ होना चाहिए और नए ढंग के पूछ लगे अक्षर नहीं होने चाहिए। मैं उन्हें पसन्द नहीं करती। तुम्हारी दूसरी विशेषता क्या है?"

बैबूरिन कुछ अनमना-सा होकर खांसने लगा, फिर बोला, "शायद... उन महाशय का आशय इस बात से है कि मैं अकेला नहीं हूं।"

"तुम विवाहित हो?"

"जी नहीं, यह बात नहीं है... लेकिन..."

मेरी दादी ने अपनी भौंहें कुछ टेढ़ी कर लीं।

"मेरे साथ एक व्यक्ति रहता है... वह पुरूष है...मेरा साथी, गरीब दोस्त।

उससे मैं कभी अलग नहीं हुआ... वह दस बरस से साथ है।"

"वह तुम्हारा कोई संबंधी है?"

"जी नहीं, संबंधी नहीं, दोस्त है। मेरे काम में उसकी वजह से किसी प्रकार की बाधा पड़ने की संभावना नहीं है।"

बैबूरिन ने यह बात इस ख्याल से कही कि कहीं मेरी दादी इस विषय में आपत्ति न कर बैठें। फिर बोला, "वह मेरे खर्चे पर और मेरे साथ एक कमरे में ही रहता है। उससे बहुत कुछ काम भी निकल सकता है, क्योंकि वह खूब पढ़ा-लिखा है... और यह सब मैं उसके बारे में शान मारने के लिए नहीं कह रहा हूं, असल में बात ऐसी ही है, और उसका चरित्र तो एकदम आदर्श है।"

मेरी दादी अपनी होंठों को चबाती हुई अधमुंदी आंखों से बैबूरिन की बातें सुनती रहीं, फिर बोलीं, "वह तुम्हारे खर्चे पर रहता है?"

"जी हां।"

"तुम उसे अपनी दरियादिली के कारण रखते हो?"

"जी नहीं, न्याय के कारण, क्योंकि एक गरीब आदमी का यह कर्तव्य है कि वह दूसरे गरीब की मदद करे।"

"सचमुच ! यह पहला मौका है, जब मैंने यह बात सुनी है। अब तक तो मेरा भी ख्याल था कि यह काम अमीर आदमियों का है।"

"अगर धृष्टता न समझी जाए तो मैं कहूंगा कि अमीर आदमियों के लिए यह एक मनोरंजन का साधन है, किंतु हमारे जैसे लोगों के लिए तो..."

"अच्छा-अच्छा, बहुत हो चुका, अब ज्यादा कहने की जरूरत नहीं।"

मेरी दादी ने उसकी बात को बीच में काटकर कहा। फिर क्षण भर सोचने के बाद उन्होंने नाक के स्वर से, जो कुलक्षण समझा जाता था, पूछा, "तुम्हारे उस आश्रित की उमर क्या है?"

"मेरी जितनी ही होगी।"

"ओह, मैंने तो यह अंदाज किया था कि वह कोई बच्चा होगा और तुम उसका पालन-पोषण कर रहे होगे।"

"जी नहीं, यह बात नहीं है! वह मेरा साथी है और इसके सिवा..."

"अच्छा, इतना ही काफी है।" एक बार फिर मेरी दादी ने उसकी बातों को बीच में ही काटकर कहा, "तुम परोपकारी आदमी मालूम पड़ते हो। जेकोव पेट्रोविच का कहना दुरूस्त है कि तुम्हारी जैसी स्थिति के आदमी के लिए यह एक अजीब बात है। अच्छा, अब हम लोग काम की बातें करें। मैं तुम्हें समझाये देती हूं कि तुम्हें क्या-क्या करना होगा। तुम्हारी मजदूरी की निस्बत... (मेरी दादी ने अपने सूखे पीले चेहरे को एकाएक मेरी तरफ करके कहा) तुम यहां क्या कर रहे हो? जाओ, अपनी पौराणिक कथाओं का पाठ याद करो।"

मैं उछल पड़ा और अपनी दादी के पास पहुंचकर उसका हाथ चूम लिया। फिर बाहर चला आया, पौराणिक कथाओं का अध्ययन करने के लिए नहीं, बल्कि बगीचे में सैर-सपाटे के लिए।

मेरी दादी की जमींदारी में एक बगीचा था, जो बहुत पुराना और बड़ा था। उसके एक तरफ पानी से लबालब तालाब था, जिसमें कई प्रकार की मछलियां बहुतायत से पाई जाती थीं। एक प्रकार की खास मछली भी उसमें थी, जो अब प्राय: लुप्त सी हो गई है। इस तालाब के एक सिरे पर बेंत की एक घनी निकुंज थी। इससे कुछ दूर ऊंचे पर एक ढालू जमीन के दोनों तरफ नाना प्रकार के सघन वृक्ष थे, जिनके नीचे कई प्रकार के फूल फूले हुए थे। इधर-उधर झाड़ियों के बीच में छोटे-छोटे जमीन के टुकड़ों पर हरे रंग की मखमली घास जमी हुई थी और उसके बीच में तरह-तरह के कुकुरमुत्ते उग आये थे। बसन्त ऋतु में यहां बुलबुलें गाती थीं, कोयल कुहू-कुहू करती थी और सारिकाओं का मोहक स्वर सुनाई पड़ता था। ग्रीष्म में यह स्थान हमेशा ठंडा रहा करता था और मैं जंगल और झाड़ियों के बीच अपने किसी प्यारे गुप्त स्थान में, जिन्हें मेरा ख्याल था कि मैं ही जानता था, जाकर बैठ जाया करता था।

अपनी दादी के कमरे से बाहर निकलकर मैं सीधा इसी तरह के एक गुप्त स्थान की ओर, जिसका नाम मैंने 'स्विट्जरलैण्ड' रख छोड़ा था, गया । किन्तु 'स्विट्जरलैण्ड' तक पहुंचने के पहले ही मुझे अधसूखी टहनियों और हरी शाखाओं की कोमल जाली के अंदर से यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि मेरे सिवा और किसी ने भी इस स्थान

का पता पा लिया है। जिस स्थान को मैं सबसे अधिक पसंद करता था, उसी स्थान पर मैंने एक ऊँचे कद के आदमी को एक लम्बा ढीला कोट और उसके पास एक लम्बी टोपी पहने हुए खड़ा देखा। मैंने चुपके-से उसके पास जाकर उसके चेहरे पर निगाह डाली। उसका चेहरा जो मेरे लिए बिल्कुल अजनबी था, बहुत लम्बा और कोमल मालूम पड़ता था। उसकी आंखे छोटी-छोटी और सुर्ख थीं। भोंड़ी नाक, मटर की फली जैसी, उसके होंठों तक लटक रही थी, जिसे देखते ही हंसी आये बिना नहीं रह सकती थी। उसके कांपते हुए होंठ गोल से थे और उनसे तेज सीटी जैसी आवाज निकल रही थी। वह अपने मजबूत हाथों की बड़ी-बड़ी अंगुलियों को अपनी छाती के ऊपरी हिस्से पर तेजी से फेर रहा था। रह-रह कि उसके हाथों की गति रूक जाती थी, होंठों की सीटी जैसी आवाज बन्द हो जाती थी और सर आगे की ओर झुक जाता था, मानों वह कुछ ध्यानपूर्वक सुन रहा हो। मैं उसके और भी पास गया और उसे पहले से भी अधिक ध्यान के साथ देखा। उस आगन्तुक के दोनों हाथों में एक-एक छोटा कटोरा था, जिसका उपयोग लोग कनेरी चिड़ियों को हैरान करने और उनसे गाना गवाने के लिए किया करते हैं। मेरे पांव के नीचे दबकर एक टहनी टूट गई, जिससे वह आगन्तुक चौंक पड़ा। उसने अपनी धुंधली छोटी आंखों से झाड़ी की ओर फेरा और वह चल पड़ा। वह लड़खड़ाकर गिरना ही चाहता था कि एक वृक्ष से ठोकर खाकर रूक गया। उसके मुंह से चीख निकल पड़ी और वह चुपचाप खड़ा हो गया।

मैं झाड़ के अंदर से निकलकर खुली जगह में चला आया। मुझे देखकर वह मुस्कुराने लगा।

मैंने उसका अभिवादन किया।

उत्तर में उसने भी मुझे 'छोटे बाबू' कहकर मेरा अभिवादन किया।

'छोटे बाबू' कहकर इस प्रकार घनिष्ठतापूर्वक उसका संबोधन करना मुझे अच्छा नहीं लगा।

"तुम यहां क्या कर रहो?" मैंने कठोर स्वर में उससे पूछा।

"मैं? इधर देखा" उसने मुस्कराते हुए जवाब दिया, "मैं छोटी-छोटी चिड़ियों को गाने के लिए पुकार रहा हूं।" उसने मुझे अपने हाथ के छोटे कटोरे दिखलाए। "चैफिंची चिडियां मेरे बुलाने पर खूब बोलती है। तुम बच्चे हो, इसलिए जरूर ही गाने वाली चिड़ियों का गाना सुनकर खुश होते होंगे। ध्यान देकर सुनो, मैं चिडियों की तरह चहचहाना शुरू करता हूं और वे फौरन उसके जवाब में चहचहाने लगेंगी। इसमें मुझे बड़ा मजा आता है।"

उसने अपने छोटे कटोरों को बजाना शुरू किया। इसके जवाब में पास के एक वृक्ष से एक चिड़िया सचमुच चहचहाने लगी। इस पर उस आगंतुक ने मूक हंसी हंसते हुए मेरी ओर आंख का इशारा किया। उसकी हंसी, उसका वह इशारा उसकी भाव-भंगिमा, उसकी कमजोर और हकलाती आवाज, उसके झुके हुए घुटने और दुबले-पतले हाथ, उसकी टोपी और लम्बा कोट, उसकी हरेक चीज से उसके भले स्वभाव का, उसकी निश्च्छलता तथा उसकी विनोदी वृत्ति का आभास मिलता था।

"क्या तुम यहां बहुत दिनों से हो?" मैंने पूछा।

"नहीं, मैं आज ही आया हूं।"

"क्यों, क्या तुम वही आदमी तो नहीं हो, जिसके बारे में..."

"मि. बैबूरिन ने यहां उस महिला से जिक्र किया था। जी हां, वही, वही।"

"तुम्हारे दोस्त का नाम बैबूरिन है। और तुम्हारा?"

"मुझे पूनिन कहते हैं, पूनिन। वह बैबूरिन है और मैं पूनिन।"

फिर उसने अपने छोटे-छोटे कटोरों को बजाना शुरू किया, "सुनो, ध्यान देकर चैफिंची का गाना सुनो। देखो तो वह किस तरह आनंद का गीत गा रही है!"

उस अजीब आदमी ने मेरे हृदय को एकाएक अपनी ओर आकर्षित कर लिया। अन्य लड़कों की भांति मैं भी अपरिचित व्यक्तियों को देखकर या तो सहम जाता था, या अपनी शान-शौकत दिखलाने लगता था, किन्तु उस आदमी के साथ तो मुझे ऐसा मालूम पड़ने लगा, मानो मैं वर्षों से उसे जानता हूं।

मैंने उससे कहा, "आओ, मेरे साथ चलो। मैं इससे भी अच्छी एक जगह जानता हूं। वहां हम लोगों के बैठने के लिए एक स्थान है। वहां बैठकर हम बांध भी देख सकते हैं।"

"अच्छी बात है।" मेरे उस नवपरिचित मित्र ने अपनी सुरीली आवाज में जवाब दिया। मैंने उसे आगे-आगे चलने दिया। वह झूमता हुआ और सिर पीछे झुकाये हुए चलता रहा। मैंने उसके कोट की पीठ पर कालर के नीचे लटकता हुए एक छोटा झब्बा देखा।

"यह क्या लटक रहा है?" मैंने पूछा।

"कहां?" उसने प्रश्न किया, और कालर पर अपना हाथ रखा। "ओह, झब्बे के बारे में तुम पूछते हो? मैं समझता हूं कि शोभा के लिए यह वहां लगा दिया गया होगा। पर शायद यह ठीक तरह से लगाया हुआ नहीं है।"

बैठने के स्थान पर पहुंच कर हम लोग बैठ गए। वह भी मेरी बगल में बैठा। "यह स्थान बड़ा मनोहर है।" यह कहते हुए उसने एक गहरी सांस ली, "वाह, कैसी सुन्दर जगह है! तुम्हारा यह बगीचा तो बहुत बढ़िया है। वाह-वाह !"

मैंने उसे एक तरफ से ध्यानपूर्वक देखा। "तुम्हारी यह टोपी तो अजीब ढंग की है।" इतना कहे बिना मैं नहीं रह सका। "जरा दिखाओ तो।"

"जरूर मेरे छोटे बाबू, लो, खूब अच्छी तरह देखो।" उसने अपनी टोपी उतार ली। मैं अपना हाथ फैलाये हुए था। मैंने अपनी आंखें उठाईं और वह खिलखिलाकर हंस पड़ा। पूनिन का सिर बिल्कुल गंजा था। उसकी ऊंची उठी खोपड़ी पर, जो चिकनी सफेद खाल से ढकी हुई थी, एक भी बाल नजर नहीं आता था।

उसने अपने हाथ को खोपड़ी पर फिराया और वह खुद भी हंसने लगा। हंसते समय ऐसा मालूम पड़ा, मानो वह किसी वस्तु को लील जाना चाहता हो। उसका मुंह खुला हुआ था, आंखें बन्द थीं और माथे पर तीन सलवटें पड़ी थीं, मानों तीन लहरें हों। आखिर वह बोला, "क्यों, मेरी यह खोपड़ी अंडे की शक्ल की-सी नहीं है?"

"हां-हां, ठीक अंडे की शक्ल-जैसी!" मैंने बड़े उत्साह के साथ उसके कथन का समर्थन किया, "तुम्हारा ऐसा सिर बहुत दिनों से है?"

"हां, बहुत दिनों से। पर जब मेरे बाल थे, उन दिनों का क्या कहना!

बिल्कुल सुनहले ऊन जैसे। ठीक उसी तरह के, जिस तरह के बालों के लिए आरगोनेट्स को पाताल की यात्रा करनी पड़ती थी।"

यद्यपि मेरी अवस्था सिर्फ बारह वर्ष की थी, तथापि पौराणिक कथाओं का मैंने अध्ययन किया था, इससे मैं आरगोनेट्स के नाम से परिचित था। फटी चिथड़ी पोशाक पहने हुए उस व्यक्ति के मुंह से आरगोनेट्स का नाम सुनकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ।

"मालूम होता है कि तुमने पौराणिक कथाएं पढ़ी हैं?" मैंने उससे प्रश्न किया और उसकी टोपी को अपने हाथों में लेकर इधर-उधर मोड़कर देखने लगा।

"मैंने इस विषय का अध्ययन किया है, मेरे प्यारे छोटेबाबू! मुझे अपने जीवन में हरेक बात के लिए काफी समय मिला है। किन्तु अब मेरी टोपी मुझे दे दो। यह मेरे सिर की नग्नता को बचाने के लिए है।"

उसने टोपी पहन ली और अपनी सफेद भौंहों को कुछ नीचे की ओर झुकाकर मुझसे मेरा और मेरे माता-पिता का परिचय पूछा।

"मैं उस महिला का नाती हूँ, जो यहां की मालकिन है।" मैंने जवाब दिया, "मैं उसके साथ अकेला रहता हूं। मेरे मां-बाप मर चुके हैं!"

पूनिन ने सहानुभूतिपूर्वक कहा, "भगवान् उनकी आत्मा को शान्ति दे। अच्छा, तो तुम बे मां-बाप के एक अनाथ बालक हो और साथ ही वारिस भी हो। भले घर के जान पड़ते हो। तुम्हारे नेत्रों में भलेपन की ज्योति जगमगा रही है और उसकी धारा भी बह रही है।" उसने अपनी अंगुलियों से मेरी आंखों की ओर इशारा किया, " अच्छा, यह तो बताओ कि तुम्हारी दादी से मेरे मित्र की बातें तय हो चुकी हैं? क्या उसे वह नौकरी मिल गयी है, जिसके लिए उसे वचन दिया गया था?"

"मैं नहीं जानता।"

पूनिन ने अपना गला साफ करते हुए कहा, "अहा, यदि थोड़े समय के लिए भी कोई इस स्थान को अपना निवास-स्थल बना सके! नहीं तो कहां-कहां भटकना पड़ेगा, और फिर भी शायद ही पैर रखने को कोई जगह मिले। जीवन में अशान्ति के भय निरंतर लगे ही रहते हैं, आत्मा विभ्रान्त बनी रहती है...।"

"मुझे यह तो बताओ," मैं उसकी बात काटकर बीच में ही बोल उठा, "क्या तुम्हारा पेशा पादरी का है?"

पूनिन ने मेरी तरफ मुखातिब होकर अपनी पलकों को आधा मूंद लिया, "तुम्हारे इस सवाल पूछने का क्या कारण है, भले आदमी?"

"क्यों, तुम्हारे बातें करने का ढंग ऐसा है, जैसे कि पादरी लोग गिरजाघरों में बोला करते हैं।"

"क्योंकि मैं प्राचीन धार्मिक ग्रन्थों के वाक्यों और पदों का बातचीत में व्यवहार करता हूँ? किन्तु इस पर तुम्हें चकित नहीं होना चाहिए। मैं यह मानता हूं कि साधारण बातचीत में इस प्रकार के वाक्यों का सादा प्रयोग नहीं होता, किंतु जब कोई व्यक्ति बनावट से विह्वल होकर बातें करने लगता है, उस समय उसकी भाषा भी अधिकाधिक प्रांजल हो उठती है। तुम्हारे जो अध्यापक तुम्हें रूसी भाषा पढ़ाते हैं, उन्होंने तो तुम्हे यह बात बतलाई होगी। क्या तुम्हें ऐसी बातें नहीं बतलाते?"

"नहीं वे मुझे ऐसी बातें नहीं बतलाते।" मैंने उत्तर दिया, "जब देहात में रहता हूं, मेरे साथ कोई शिक्षक नहीं रहता। मास्को में मेरे बहुत से शिक्षक हैं।"

"क्या तुम देहात में बहुत दिनों तक ठहरोगे?"

"दो मास, इससे अधिक नहीं। दादी कहती हैं कि मैं देहात में रहकर बिगड़ रहा हूं, यद्यपि यहां भी मेरे ऊपर शासन करने वाली एक अध्यापिका है।"

"वह अध्यापिका फ्रांसीसी जाति की है?"

"हां ?"

पूनिन ने अपने कान के पीछे खुजलाते हुए कहा, "वह कोई मिस (कुमारी) है?"

"हां, उसका नाम मिस फ्रीकेट है।"

एकाएक मुझे यह जान पड़ा कि मेरे जैसे बारह वर्ष के एक लड़के के लिए किसी शिक्षक के बजाय शासन करने वाली अध्यापिका का होना, जैसी एक छोटी बालिका के लिए रहा करती है, कलंक की बात है !

"किंतु मैं उसकी परवा नहीं करता।" मैंने घृणासूचक भाव में कहा, "मैं क्यों परवा करने लगा !"

पूनिन ने अपना सिर हिलाया। "ओह, तुम भले आदमी विदेशियों को बहुत चाहते हो। तुम लोग स्वदेशी बातों को छोड़कर विदेशी चीजों को चाहने लग गये हो। तुम्हारा दिल विदेशों से आने वाली वस्तुओं की ओर लग गया है: छाड़ि स्वदेशी वस्तु विदेशी प्रेम बढ़ायौ।"

"ओ हो, क्या तुम कविता में बातें कह रहे हो?" मैंने पूछा।

"क्यों न करूं ? मैं बराबर इस तरह बातें कर सकता हूं, जितना तुम सुनना चाहो, क्योंकि स्वभावत: ही मेरे मुंह से छन्दबद्ध वाणी निकला करती है..."

इसी समय बगीचे में हम लोगों के पीछे से एक जोर की तेज सीटी की आवाज सुनाई पड़ी। मेरा वह नवपरिचित व्यक्ति जल्दी से बेंच पर से उठकर खड़ा हो गया।

"छोटे बाबू, सलाम। मेरा दोस्त मुझे बुलाता है... शायद कोई काम हो। अच्छा, सलाम, माफ करना..."

वह झाड़ियों में घुसकर गायब हो गया और मैं उसके बाद भी कुछ देर तक अपनी जगह पर बैठा रहा। मुझे कुछ चिन्ता-सी प्रतीत हुई और इसके साथ ही मेरे मन में कुछ आनंददायक भावना भी उदित हुई। मैंने इससे पहले और किसी के साथ इस तरह मुलाकात नहीं की थी और न इस तरह बातचीत ही की थी। इसके बाद क्रमश: मैं स्वप्न देखने लगा। फिर मुझे अपनी पौराणिक कथाओं की याद आ गई और मैं घर की ओर चल पड़ा।

घर पहुंचकर मुझे मालूम हुआ कि मेरी दादी ने बैबूरिन को रखने का प्रबन्ध कर लिया है। उसे नौकरों के रहने के स्थान में घुड़साल के सामने वाला छोटा-सा कमरा दिया गया था। उसने उसी कमरे में अपने मित्र के साथ डेरा डाल दिया था।

दूसरे दिन प्रात: काल चाय पी चुकने के बाद मैं मैडम फ्रीकेट से छुट्टी मांगे बिना ही नौकरों के निवास स्थान की ओर चल पड़ा। मैं उस विलक्षण मनुष्य के साथ एक बार फिर बातचीत करना चाहता था, जिससे मैंने पिछले दिन मुलाकात की थी। दरवाजे को बिना खटखटाये ही, इसका ख्याल भी कभी मुझे नहीं आ सकता था, सीधे कमरे में दाखिल हुआ। वहां मैंने पूनिन को, जिसकी मैं तलाश कर रहा था, न पाकर उसके अभिभावक परोपकारी बैबूरिन को पाया। वह खिड़की के सामने नंगे बदन खड़ा था। उसके दोनों पांव एक दूसरे से बहुत अलग थे। वह अपने सिर और गर्दन को एक लम्बे तौलिये से रगड़ रहा था।

"क्या चाहते हो?" उसने अपने हाथ को पहले की तरह ही ऊपर उठाये हुए दोनों भौंहों को मरोड़ते हुए पूछा।

"मालूम होता है, पूनिन घर पर नहीं है?" मैंने बिना अपनी टोपी उतारे ही सहज स्वतंत्र ढंग से पूछा।

"हां मिस्टर पूनिन निकैण्डर वेविलिच, इस समय घर पर नहीं हैं।" बैबूरिन ने सोच-समझकर उत्तर दिया, "किंतु नौजवान, मैं तुमसे एक बात कहना चाहता हूं, बिना पूछे इस तरह दूसरे के कमरे में दाखिल होना ठीक नहीं हैं।"

मैं ! नौजवान ! इसका इतना दुस्साहस ! मेरा चेहरा क्रोध से लाल हो उठा।

"तुम नहीं जानते हो कि मैं कौन हूं?" मैंने पहले के समान सहज ढंग से नहीं, बल्कि रौब दिखलाते हुए कहा, "मैं यहां की मालकिन का नाती हूं।"

"होगे, इससे क्या बनता-बिगड़ता है?" बैबूरिन ने फौरन जवाब दिया और फिर तौलिये से अपना बदन रगड़ने लगा।

"भले ही तुम मालकिन के नाती हो, किंतु फिर भी तुम्हें दूसरे के कमरे में आने का अधिकार नहीं है।"

"दूसरे लोगों के ? क्या मतलब ? यहां वहां-सब जगह मेरा घर है।"

"नहीं, माफ कीजिये, यह घर मेरा है, क्योंकि यह कमरा मेरे काम के बदले में मुझे दिया गया है।"

"रहने दीजिये अपनी यह सीख।" मैंने बीच में ही उसकी बात काटकर कहा, "मैं अपना कर्तव्य तुमसे अच्छी तरह जानता हूं।"

"तुम्हें सिखलाने की जरूरत है।" वह फिर मेरे कथन के बीच में ही बोल उठा, "क्योंकि इस समय तुम्हारी वह अवस्था है जब तुम्हें... मैं अपना कर्तव्य जानता हूँ, लेकिन मैं अपने अधिकारों को भी भली-भांति जानता हूं। और अगर तुम इसी ढंग से बातें करते रहे तो मुझे तुम्हें कमरे से बाहर निकल जाने के लिए कहना पड़ेगा...।"

मालूम नहीं, हम लोगों के इस विवाद का किस प्रकार अंत हुआ होता, यदि उसी क्षण पूनिन लड़खड़ाता हुआ उस कमरे में प्रवेश न करता। शायद वह हम लोगों की मुखाकृति देखकर ही यह ताड़ गया कि हम दोनों के बीच कुछ मनमुटाव उत्पन्न हो गया है और फौरन अत्यंत प्रसन्नतापूर्ण भावों को प्रकट करता हुआ मेरी ओर देखने लगा।

"अहा ! मेरे छोटे बाबू ! छोटे बाबू!" वह अपने हाथों को जोर से घुमाते हुए और नि:शब्द हंसी हंसते हुए चिल्ला उठा, " आओ भाई ! छोटे बाबू ! मेरे यहां आये हो ? खूब आये ! आओ, प्यारे !"

मैंने विचार किया- उसके इस प्रकार बोलने का क्या मतलब हो सकता है ? क्या वह इस प्रकार बेतकुल्लफी के साथ, सुपरिचित आदमी की तरह, मुझसे बातचीत कर सकता है ? वह कहता गया, "आओ, मेरे साथ बगीचे में आओ। मैंने वहां एक चीज देखी है... यहां इस बन्द जगह में, ठहरने से क्या फायदा ! चलो, हम दोनों चलें !"

मैं पूनिन के पीछे-पीछे हो लिया। दरवाजे पर पहुंचकर मैंने विचार किया कि एक बार मुंह फिराकर बैबूरिन की ओर अवज्ञासूचक दृष्टिपात कर देना अच्छा है, जिससे उसे यह मालूम हो जाय कि मैं उससे बिल्कुल नहीं डरता।

मेरे इस प्रकार देखने पर उसने भी उसका जवाब उसी ढंग से दिया और जान-बूझकर अपने तौलिए में छींका, जिसका उद्देश्य यह था कि मुझ पर यह बात अच्छी तरह प्रकट हो जाय कि वह मुझे किस प्रकार पूर्ण घृणा की दृष्टि से देखता है।

ज्यों ही दरवाजा हमारे पीछे बन्द हुआ, मैंने पूनिन से कहा, "तुम्हारा यह मित्र बड़ा ढीठ जान पड़ता है !"

भयभीत सा होकर पूनिन ने अपने चौकन्ने चेहरे को मेरी ओर कर लिया।

"तुमने 'ढीठ' शब्द का प्रयोग किसके लिए किया है ?" उसने मुझसे पूछा।

"क्यों ? उस व्यक्ति के लिए... उसका नाम क्या है ?" वह...बैबूरिन।"

"पारामन सेम्योनेविच?"

"हां, वही... काले मुंह वाला।"

"अरे..अरे..अरे.." पूनिन ने प्यार से मुझे डांटा। "छोटे बाबू, तुम इस तरह बात क्यों करते हो ? बैबूरिन एक अत्यंत योग्य और अपने सिद्धांतो पर दृढ़ रहने वाला असाधारण पुरूष है। यह निश्चय जानो कि वह अपने प्रति किया हुआ अपमान सहन नहीं कर सकता, क्योंकि वह अपना महत्व भली-भांति जानता है। उसका ज्ञान-भंडार बहुत विस्तृत है और यह स्थान उसके उपयुक्त नहीं है। मेरे प्यारे, तुम्हें उसके साथ पूर्ण शिष्टता का व्यवहार करना चाहिए। क्या तुम जानते हो कि वह (इस समय पूनिन झुककर मेरे कान के पास आ गया) एक प्रजातंत्रवादी है ?"

मैं पूनिन को घूरकर देखने लगा। मैंने इस बात की बिल्कुल आशा नहीं की थी। छोटी-छोटी पुस्तकों से तथा अन्य ऐतिहासिक ग्रन्थों से मुझे यह बात मालूम थी कि किसी जमाने में प्राचीन काल में यूनान और रोम में प्रजातंत्रवादी हुआ करते थे। किसी अज्ञात कारण से मैंने उन लोगों की जो तस्वीर अपने मन में खींच रखी थी, उसमें वे लोहे की टोपी पहने, अपनी भुजाओं में गोल ढाल बांधे और बड़े-बड़े नंगे पांव वाले जीव थे, किंतु वास्तविक जीवन में, वर्तमान रूप में, अमुक प्रान्त में प्रजातंत्रवादी पाये जाते हैं- इस ख्याल ने तो मेरी सारी भावनाओं को ही उलट दिया और मुझे सर्वथा भ्रमित बना डाला।

"हां, मेरे प्यारे, हां, बैबूरिन प्रजातंत्रवादी है।" पूनिन ने अपनी पहली बात को फिर दुहराया, "अत:, अब आइन्दा तुम्हें ख्याल रखना चाहिए कि उसके जैसे आदमी के साथ किस प्रकार बात करना उचित है। अच्छा, अब हम लोग बगीचे में चलें। जरा ख्याल तो करो कि मुझे वहां कौन-सी वस्तु मिली है ? कौवे के घोंसले में कोयल का अण्डा। कितनी अच्छी चीज है।"

मैं पूनिन के साथ बगीचे में गया, किंतु मेरे मन में रह-रह कर वही बात आती थी प्रजातंत्रवादी ! प्रजा... तंत्र... वादी !

आखिर मैंने यह निश्चय किया,, "हो-न-हो, उस आदमी के इस प्रकार तुनकमिजाज होने का कारण यही है।"

उस दिन से पूनिन और बैबूरिन-इन दोनों आदमियों के प्रति मेरे रूख में एक निश्चित परिवर्तन हो गया। बैबूरिन के प्रति मेरे मन में बैर-भाव उत्पन्न हो गया, जिसके साथ-साथ कुछ समय बाद आदर जैसा एक प्रकार का भाव भी मिल गया। और क्या सचमुच मुझे उसका भय नहीं लगता था? उसने शुरू में मेरे साथ रूखाई का जो बर्ताव किया था, वह बिल्कुल गायब हो जाने पर भी मैं निडर नहीं हुआ था। कहने की आवश्यकता नहीं कि पूनिन से मुझे कोई डर नहीं था। मैं उसका सम्मान भी नहीं करता था। मैं उसे एक मसखरा व्यक्ति समझता था, किंतु मैं उसे पूर्ण अंतःकरण से प्रेम करता था। उसके साथ घंटों बिता देना, उसकी कहानियों को ध्यानपूर्वक सुनना और उसके साथ अकेले रहना मेरे लिए वास्तविक आनंद का विषय हो गया था। मेरी दादी को यह बात पसंद नहीं थी कि मैं इस प्रकार निम्नवर्ग के एक मनुष्य के साथ घनिष्ठतापूर्वक मिला-जुला करूं, पर जब कभी मुझे फुरसत मिलती, मैं दौड़कर अपने उस विलक्षण प्रसन्नचित, प्रेमी मित्र के पास पहुंच जाता था। फ्रांसीसी अध्यापिका के चले आने के बाद- जिसे मेरी दादी ने अपमानित करके मास्को वापस भेज दिया था, क्योंकि उसनें पड़ोस में आये हुए एक फौजी कप्तान के साथ वार्तालाप के प्रसंग में उसने हम लोगों के घर की शुष्कता की शिकायत करने की धृष्टता दिखलाई थी- हम दोनों का मिलना जुलना और भी जल्दी-जल्दी होने लगा। एक बारह वर्ष के बालक के साथ देर-देर तक बातचीत करते रहने पर भी पूनिन उकताता नहीं था। ऐसा मालूम होता था कि वह खुद बातचीत करने के लिए उत्कण्ठित रहता हो। वृक्षों के कुंज के नीचे सूखी चिकनी घास पर या तालाब के निकट के वृक्षों के बीच किनारे की सर्द बालू पर-जिसमें वृक्षों की गठीली जड़ें निकली हुई थीं और वे इस तरह आपस में गुथी हुई थीं, मानों बड़ी-बड़ी काले रंग की नसें हों, या सांप हों या कोई जीव हों, जो जमीन के अन्दर से निकले हुए हों - सुरक्षित छाया में उसके साथ बैठकर न मालूम कितनी बार मैंने उसकी कहानियां सुनी थीं। पूनिन ने अपने जीवन की सारी कहानी, छोटी-से-छोटी बात तक मुझे सुनाई। उसने अपने समस्त सुखों-दु:खों का वर्णन किया और सदैव मैंने उसके साथ अपनी सच्ची सहानुभूति प्रकट की। पूनिन का पिता पादरी का काम करता था। वह एक बहुत ही अच्छा आदमी था, किंतु नशे में वह हद से ज्यादा कठोर बन जाता था।

पूनिन ने एक विद्यालय में शिक्षा प्राप्त की थी, पर वहां की ठुकाई को सहन करने में असमर्थ होकर और पादरी के पेशे की तरफ रूचि न होने के कारण वह साधारण गृहस्थ की तरह जीवन व्यतीत करने लगा, जिसके परिणाम स्वरूप उसे सारी कठिनाइयां भुगतनी पड़ीं और आखिर वह आवारा बनकर इधर-उधर भटकने लगा। पूनिन अक्सर मुझसे कहा करता था, "यदि मुझे अपने उपकारी परामन सेम्योनेविच (वह बैबूरिन के संबंध में जब कुछ कहा करता था तो इसी नाम से) भेंट न हुई होती तो कंगाली एवं पाप के दलदल में फॅसे बिना न रहता।" बड़े-बड़े शब्दों और वाक्यों का प्रयोग करना पूनिन को बहुत पसंद था और उसकी प्रवृत्ति यदि मिथ्या कथन की ओर नहीं, तो औपन्यासिक रूप में कथा कहने या बढ़ा-चढ़ा बात कहने की ओर अवश्य थी। वह प्रत्येक वस्तु को देखकर प्रफुल्लित हो जाता था और उसकी प्रशंसा करने लगता था। मैं भी उसका अनुकरण करते हुए किसी बात को बढ़ाकर कहने और उस पर प्रफुल्लित हो जाने का आदी हो गया था।

"तुम कैसे झक्की आदमी हो गये हो ! भगवान तुम पर दया करे !" मेरी बूढ़ी धाय अक्सर मुझ से कहा करती थी। पूनिन की कहानियों को मैं बड़े चाव से सुना करता था, किंतु उसकी कहानियों से भी बढ़कर मैं उसके साथ मिलकर पढ़ना पसंद करता था।

सुयोग पाकर जब कभी वह एकाएक कहानी के किसी साधु की तरह, या किसी सुंदर परी की तरह, अपनी बांह के नीचे एक मोटी-सी बड़ी पुस्तक दबाये हुए मेरे सामने उपस्थित होता, और चुपके से अपनी लम्बी-टेढ़ी अंगुली का इशारा करते हुए, या रहस्यपूर्ण कटाक्ष करते हुए, वह अपने सिर से, अपनी भौंहों से, अपने कंधों से, अपने संपूर्ण शरीर से, बगीचे के घने-से-घने गुप्त स्थान की ओर संकेत करता-जहां कोई भी आदमी हम दोनों के पीछे नहीं आ सकता था और जहां हमारा पता ढूंढ़ निकालना असम्भव था-उस समय मेरे मन में जो भावना उत्पन्न होती थी, उसका वर्णन करना असंभव है। जब हम दोनों अलक्षित रूप में वहां से चल देते, जब हम अपने किसी गुप्त स्थल पर पहुंच जाते और एक-दूसरे के पास बैठे होते, उस समय जब धीरे-धीरे-धीरे पुस्तक खोली जाती और उसके भीतर से एक तेज गंध निकलती, जो मुझे अनिवर्चनीय मधुर मालूम होती थी, उस समय मैं किस हर्षातिरेक से, किस मौन प्रतीक्षा से पूनिन के चेहरे को, उसके होंठों को-जिन होंठों से क्षण-भर में ही इतनी सरस धारा-प्रवाह वाणी निकलने वाली थी, ताका करता था? आखिर जब उसके पढ़ने के प्रथम शब्द मुझे सुनाई पड़ते उस समय मेरे चारों तरफ की वस्तुएं गायब हो जातीं। गायब नहीं हो जातीं, बल्कि यों कहिये कि दूर चली जातीं, धुधले मेघों में प्रवृष्टि हो जातीं और जो कुछ रह जाता वह मैत्री की भावना मात्र थी। वे वृक्ष, उनकी वे हरी-हरी पत्तियां, वह ऊंची-ऊंची घास हमारे ऊपर पर्दा डाले हुए हैं, हमें शेष संसार की दृष्टि से अंतर्हित किये हुए हैं, कोई नहीं जानता कि हम दोनों कहां हैं, क्या कर रहे हैं- इस समय हमारे साथ जो कुछ है, वह कविता है, हम इसी में सराबोर हैं, उसी के नशे में मस्त हैं। हम इस समय किसी गम्भीर महान रहस्यमय भावना का अनुभव कर रहे हैं।

पूनिन ने अपने लिए काव्य-विशेष को चुन लिया था-ऐसा काव्य, जो संगीतमय एवं ध्वनिपूर्ण हो। वह काव्य के लिए अपने जीवन तक को उत्सर्ग कर देने को तैयार रहता था। वह कविता का पाठ ही नहीं करता था, बल्कि बड़ी शान के साथ छंदों की व्याख्या भी करता था। उस समय ऐसा मालूम होता था, मानो उसके मुंह से ताल-लययुक्त वाणी का प्रवाह निकल रहा हो, उसकी नासिका से अजस्र वर्षण हो रहा हो, मानो कोई मदोन्मत मनुष्य आत्म-विस्मृत बनकर किसी अचिन्त्य प्रदेश में विचरण करने लगा हो और उस समय उसे अपने तन-मन की बिल्कुल सुध-बुध नहीं रही हो।

उसकी एक आदत और थी, वह यह कि पहले वह छंदों को धीरे-धीरे कोमल स्वर में पढ़ता, मानों वह खुद मन-ही-मन में पढ़ रहा हो। इस प्रकार पढ़ने की क्रिया को वह प्रथम पाठ बतलाता, फिर इसके बाद वह उसी छंद को जोर से गरजकर पढ़ने लगता और ऐसा करते हुए एकदम उछल पड़ता। उस समय उसके हाथ ऊपर की ओर उठ जाते और उसकी भाव-भंगिमा आधी विनम्र और आधी दर्पयुक्त-सी हो जाती। इस प्रकार हम लोग सिर्फ लोमोनोसोव, सुमारोकोव और कैंटीमीर (कविताएं जितनी ही पुरानी होती थीं, पूनिन उतने ही चाव से उन्हें पढ़ा करता था) के काव्यों का ही पारायण नहीं कर गये, बल्कि हेरस्कोव के 'रोजिएड' को भी पढ़ डाला। सच बात यह है कि इस 'रोजिएड' को पढ़कर ही मेरा उत्साह बहुत उमड़ पड़ा था। अन्य पात्र-पात्रियों के अलावा इसमें एक शक्तिशालिनी तातार स्त्री का-एक विशालकाय नायिका का-चरित्र-चित्रण है। मै अब उसका नाम तक भूल गया हूं, पर उन दिनों उसका नाम लेते ही मेरे हाथ-पांव सर्द हो जाते थे। "हां!' पूनिन बड़ी खूबी के साथ अपने सर को हिलाते हुए कहता, "हेरस्कोव के काव्यों को पढ़ते समय सहज ही उनसे छुटकारा पाना संभव नहीं है। मौके-मौके पर उनमें कोई-कोई ऐसी पंक्ति निकल आती है, जो हृदय को विदीर्ण किये बिना नहीं रहती। उसके मर्म को अच्छी तरह समझ सकते हैं। उसे पूरी तरह से हृदयंगम करने की कोशिश कीजिये, पर वह भागकर दूर हट जायेगा। उसका नाम बहुत ठीक रखा गया है। 'हेरस्कोव' शब्द ही इस बात का सूचक है। "लोमोनोसोव के काव्यों को पूनिन इसलिए दोषयुक्त समझता था कि उसकी शैली बहुत ही सरल एवं स्वतंत्र है। डर्जहेविन के प्रति उसका भाव प्राय: शत्रुतापूर्ण था। उसके बारे में वह कहा करता था कि उसे कवि की अपेक्षा भाट कहना अधिक उपयुक्त है। हमारे घर में साहित्य एवं काव्य की ओर कुछ भी ध्यान नहीं दिया जाता था। सिर्फ इतनी ही बात नहीं थी, बल्कि कविता और खासकर रूसी भाषा की कविता बिल्कुल गंवारू और खोटी समझी जाती थी। मेरी दादी तो इसे कविता न कहकर महज तुकबंदी कहा करती थीं कि इस प्रकार की तुकबंदियों का प्रत्येक रचयिता या तो कोई पुराना पियक्कड़ होगा, या पक्का धूर्त। इस प्रकार की भावनाओं में पाले-पोसे गये मेरे जैसे बालक के लिए यह स्वभाविक था कि या तो मैं पूनिन से ऊबकर उससे अलग हो जाऊं (वह बेढंगा और मैला-कुचैला रहा करता था, जो मेरे उच्चवंशोचित स्वभाव के सर्वथा विरूद्ध था) या फिर उसके द्वारा आकर्षित एवं मुग्ध होकर मैं उसका अनुकरण करने लगूं और उसके समान कविता-प्रेमी बन जाऊं... आखिर हुआ भी ऐसा ही। मैं भी कविता पढ़ने लग गया, या जैसा मेरी दादी कहा करती थीं, तुकबंदियों में गर्क रहने लगा... मैंने छंद-रचना की चेष्टा की और एक पद्य बना भी डाला, जिसमें एक बाजे का वर्णन किया गया था-

मंजु मनोहर ढपली की तु राग लेउ सुनि,

कैसी सुंदर लगै तासु मंजीर-प्रतिध्वनि।

मेरे इस प्रयत्न में जो एक प्रकार की अनुकरणनात्मक लय थी, उसकी पूनिन ने सराहना की, किन्तु कविता के विषय को निम्न-कोटि का एवं संगीत के अयोग्य समझकर उसे नापसंद किया।

हाय ! हमारे वे सारे प्रयत्न, भावावेश एवं हर्षोल्लास, हमारा वह एकान्त पठन-पाठन, हमारा वह एकान्त जीवन, हमारी वह कविता-इन सबका अचानक अंत हो गया ! वज्रापात की तरह हम पर एकाएक विपत्ति टूट पड़ी।

मेरी दादी हरेक चीज में स्वच्छता एवं व्यवस्था पसंद करती थीं, ठीक उसी तरह, जैसा उन दिनों क्रियाशील सेनापति किया करते थे। हमारे बगीचे में भी सफाई और व्यवस्था का होना जरूरी था, इसलिए समय-समय पर उसमें गरीब किसानों को-जिनके कोई परिवार नहीं था, न जमीन, न कोई अपना माल-मवेशी-और घर के नौकरों

में उन आदमियों को, जो कृपा-पात्र नहीं रहे थे, या बुढ़ापे के कारण अयोग्य करार दिये गये थे, खदेड़कर लाया जाता था और उन्हें रास्तों को साफ करने, किनारे के घास-पात को उखाड़ने, क्यारियों में मिट्टी फोड़ने तथा इसी तरह के दूसरे कामों में लगा दिया जाता था। एक दिन जब ये सब काम हो रहे थे, मेरी दादी बगीचे में गईं, और अपने साथ मुझे भी लेती गईं। चारों ओर वृक्षों के बीच और सब्जियों के अगल-बगल हमें सफेद, लाल और नीले रंग के कुरते दीख पड़े। सभी तरफ हमें कुदालों से छीलने और उसके झनझनाते तथा तिरछी चलनियों में मिट्टी के ढेलों के गिरने की आवाज सुनाई पड़ी। मजदूरों के पास से होकर जब मेरी दादी गुजर रही थीं, उन्होंने अपनी तीक्ष्ण दृष्टि से फौरन देख लिया कि एक मजदूर औरों की अपेक्षा मंद गति से काम कर रहा था और उसने किसी प्रकार की उत्सुकता प्रकट किये बिना ही मेरी दादी के सम्मानार्थ अपनी टोपी उतार ली। वह युवक अभी बिल्कुल नौजवान था, उसका चेहरा मुरझाया हुआ था, आंखे ज्योतिहीन और धंसी हुई थीं। उसका सूती कुरता बिल्कुल फटा हुआ था और इधर-उधर थिंगले लगे हुए थे। उसके दुबले कंधों पर कदाचित ही वह कुरता बैठता था।

"वह कौन है ?" मेरी दादी ने फिलिप्पिच से, जो उनके पीछे-पीछे उनके प्रश्न की बाट जोहता हुआ जा रहा था, पूछा।

"किसके...बारे में...हूजूर ने फरमाया ?" फिलिप्पिच रूक-रूककर बोला।

"अरे मूर्ख, मेरा मतलब उस आदमी से है, जो मेरी ओर उदास-भाव से देख रहा है। वह-जो सामने खड़ा है और काम नहीं कर रहा है।"

"वह ! जी...व...ह...वह पावेल का, जो अब मर चुका है, लड़का यरमिल है।"

पावेल अब से दस वर्ष पूर्व मेरी दादी के मकान में प्रधान खानसामा था। उसे मेरी दादी बहुत चाहती थीं, परंतु अचानक वह उनकी नजर में गिर गया और उसे उस काम से हटाकर चरवाहे के काम पर रख दिया गया। किंतु वहां भी वह बहुत दिनों तक नहीं रह सका। उसका दिन ब दिन पतन होता गया और वह कुछ समय तक दूर की एक छोटी झोंपड़ी में मुट्ठी भर आटे-दाल पर अपनी गुजर करता रहा। आखिर लकवे की बीमारी से उसकी मृत्यु हो गई। वह अपने पीछे परिवार को बिल्कुल दीन दशा में छोड़ गया।

"अच्छा !" मेरी दादी ने उसकी आलोचना करते हुए कहा, "यह साफ मालूम पड़ता है कि बेटा भी अपने बाप के गुणों पर जा रहा है। हमें इस आदमी के लिए भी कोई इंतजाम करना होगा। मुझे ऐसे आदमी की जरूरत नहीं है।"

मेरी दादी लौटकर चली गईं और उन्होंने उस आदमी के लिए इंतजाम किया। तीन घंटे के बाद यरमिल पूरे साज-सामान के साथ मेरी दादी के कमरे की खिड़की के नीचे लाया गया। वह अभागा लड़का यहां से दूसरी कोठी पर भेजा जा रहा था। जहां वह खड़ा था, वहां से कई कदम के फासले पर घेरे की दूसरी तरफ एक छोटी-सी गाड़ी उस गरीब के साज-सामान से लदी हुई खड़ी थी। वह जमाना ही ऐसा था। यरमिल नंगे सिर मुंह नीचा किये था, उसकी पीठ पीछे एक डोरी से बंधे हुए उसके जूते लटक रहे थे। उसका चेहरा महल की ओर था। उससे यह जाहिर नहीं होता था कि उसे किसी तरह की निराशा, शोक या घबराहट है। उसके सूखे होंठों पर एक पागलों की-सी मुस्कुराहट थी। वह अपने ज्योतिहीन अर्द्धनिमीलित नेत्रों से पृथ्वी की ओर एकटक देख रहा था। मेरी दादी को उसकी उपस्थिति की सूचना दी गई। वह आरामकुर्सी पर से उठीं और अपनी रेशमी साड़ी को धीरे से फड़फड़ाती हुई पढ़ने के स्थान की खिड़की तक गईं, और नाक के अग्र भाग पर सोने की कमानी वाले दुहरे शीशे के चश्मे को रखते हुए

उन्होंने उस नव-निर्वासित व्यक्ति की ओर दृष्टि डाली। उस समय उनके कमरे में और भी चार आदमी थे- खानसामा, बैबूरिन, दिन में मेरी दादी के पास रहने वाला एक लड़का और मैं।

मेरी दादी ने अपने सिर को ऊपर-नीचे हिलाया।

"श्रीमती जी !" दबी जबान में एकाएक आवाज सुनाई पड़ी।

मैंने इधर-उधर दृष्टि डाली। बैबूरिन का चेहरा लाल-एकदम लाल-हो रहा था। उसकी लटकती हुई भौंहों के नीचे प्रकाश की छोटी-छोटी तीक्ष्ण रेखाएं दीख पड़ती थीं...इसमें कोई संदेह नहीं कि बैबूरिन ने ही 'श्रीमती जी' शब्द का उच्चारण किया था।

मेरी दादी ने भी अपनी नजर दौड़ाई और अपने चश्मे को यरमिल से बैबूरिन की तरफ फिराया।

"यह कौन बोलता है ?" उन्होंने धीरे-से नाक के स्वर बोलते हुए कहा। बैबूरिन खिसककर कुछ आगे आ गया।

"श्रीमती जी!" उसने कहना शुरू किया, "मैं ही वह व्यक्ति हूं...मैं...साहस...मैं ख्याल... मैं श्रीमती जी से साहसपूर्वक यह निवेदन करना चाहता हूं कि इस कार्रवाई में आप गलती कर रही हैं।"

"यानी?" मेरी दादी ने अपने चश्मे को आंख पर से हटाये बिना ही उसी स्वर में कहा।

"मैं यह कहना चाहता हूं..." बैबूरिन साफ-साफ प्रत्येक शब्द का यत्नपूर्वक उच्चारण करता हुआ बोला, "मैं उस लड़के के बारे में यह कह रहा हूं, जिसे बेकसूर दूसरी कोठी पर भेजा जा रहा है...। इस प्रकार के प्रबंध से...मैं साहस के साथ निवेदन करता हूं-असंतोष फैलता है, और-ईश्वर न करे...इसके अन्य परिणाम भी हो सकते हैं। इसके सिवा ऐसा करना बड़े-बड़े मालिकों को जो अधिकार दिये गए हैं, उनका दुरूप्रयोग करना है।"

"अच्छा जनाब, आप यह तो फरमाइये कि आपने तालीम कहां पाई ?" दादी ने कुछ समय मौन रहने के बाद पूछा और अपने चश्मे को नीचे उतारकर रख दिया।

बैबूरिन हतप्रभ-सा हो गया।"क्या फरमाया श्रीमती जी ने ?" उसने बड़बड़ाते हुए कहा।

"मैं तुमसे पूछती हूं, तुमने कहां तालीम पाई है? तुम शब्द तो ऐसे विद्वत्तापूर्ण इस्तेमाल करते हो !"

"मैं...जी, मेरी शिक्षा..." बैबूरिन ने कहना शुरू किया। मेरा दादी ने घृणासूचक भाव में अपने कंधे को हिलाया।

"मालूम होता है", उन्होंने बीच में ही बात काटकर कहा, "तुम्हें मेरा इंतजाम ठीक नहीं जंचता, पर इससे मुझे कोई सरोकार नहीं, क्योंकि अपनी रैयत के बीच मैं ही सर्वेसर्वा हूं और उनके लिए किसी के सामने जवाबदेह नहीं। लोग मेरी बातों में दखल दें और मेरे कामों की मेरे सामने ही आलोचना करें, इसे सहन करने की आदत नहीं। मुझे अज्ञात कुलशील विद्वान् परोपकारी व्यक्तियों की जरूरत नहीं है। मैं ऐसा नौकर चाहती हूं जो बिना किसी हील-हुज्जत के मेरी मर्जी के मुताबिक काम करे। तुम्हारे यहां आने के पहले से मैं बराबर इसी तरह से रहती आयी हूँ और आगे भी ऐसे ही रहूंगी। तुम मेरे लायक आदमी नहीं हो, इसलिए बर्खास्त किये जाते हो। निकोलाई स्टोनेव..." मेरी दादी ने कारिंदा की ओर मुखातिब होकर कहा, "इस आदमी का वेतन चुका दो, जिससे यह आज खाने के

वक्त से पहले ही यहां से रूखसत हो जाय। सुना न ? मुझे गुस्सा मत दिलाओ। दूसरा आदमी भी...यानी वह मूर्ख, जो उसके साथ रहता है, उसे भी यहां से रवाना कर देना चाहिए। यरमिल यहां क्यों ठहरा हुआ है ?" खिड़की के बाहर देखती हुई वह बोलीं, "मैंने उसे देख लिया है। अब और वह क्या चाहता है ?" मेरी दादी ने खिड़की की तरफ अपने रूमाल को हिलाया, मानो वह किसी भिनभिनाती मक्खी को दूर भगाना चाहती हों। इसके बाद वह कुर्सी पर बैठ गईं और हम लोगों की तरफ देखकर रूखे स्वर में बोलीं-"इस कमरे के सब आदमी बाहर चले जायं !"

हम सबके सब उस कमरे से बाहर निकल आये, सिर्फ वह लड़का नौकर रह गया, क्योंकि दादी की निगाह में वह तो कोई आदमी था ही नहीं।

मेरी दादी की आज्ञा का अक्षरश: पालन किया गया। कलेवे के पहले ही बैबूरिन और पूनिन दोनों वहां से विदा हो रहे थे। यहां मैं अपने शोक, अपनी अकृत्रिम, सच्ची बालोचित निराशा के भाव वर्णन करूंगा। मेरे मन में प्रजातंत्रवादी बैबूरिन के इस साहसिक कार्य द्वारा रौब भरी प्रशंसा का जो प्रबल भाव उत्पन्न हुआ था, वह भी मेरे इस निराशा तथा खेद के भाव के सामने फीका पड़ गया। मेरी दादी के साथ बातचीत करने के बाद बैबूरिन फौरन अपने कमरे में चला गया और अपना असबाब बांधने लगा। यद्यपि मैं बराबर उसके आसपास चक्कर काटता रहा, या दरअसल पूनिन के चारों ओर चक्कर काटता रहा, किंतु फिर भी बैबूरिन ने एक बार मेरी ओर देखने या एक शब्द भी बोलने की कृपा नहीं की। पूनिन भी बिल्कुल घबराया हुआ था और वह भी कुछ नहीं बोला, पर उसकी दृष्टि बराबर मेरी तरफ थी। उसकी आंखों में आंसू भरे हुए थे... वे न तो नीचे गिरते थे और न सूखने ही पाते थे। वह अपने संरक्षक के कार्य की आलोचना करने का साहस नहीं कर सकता था-उसकी दृष्टि में बैबूरिन कोई गलती कर ही नहीं सकता था, किंतु दु:ख एवं निराशा का क्या कहना ! पूनिन और मैंने 'रोजिएड' काव्य से अन्तिम बार कुछ पढ़ने की चेष्टा की। हम दोनों ने गोदाम में अपने को बन्द कर लिया- बगीचे में जाने का स्वप्न देखता तो व्यर्थ था, किन्तु एक पंक्ति भी पढ़ नहीं पाये कि दोनों फूट-फूटकर रोने लगे। मेरी तो हिचकी बंध गई, यद्यपि उस समय मेरी अवस्था बारह वर्ष की थी और मैं वयस्क होने का दावा करता था!

गाड़ी में बैठने के बाद बैबूरिन आखिर मेरी तरफ मुखातिब हुआ और अपने चेहरे की स्वभाविक कठोरता को कुछ मुलायम करके बोला, "हे भद्र युवक, तुम्हारे लिए इसमें एक नसीहत है। इस घटना को याद रखना और बड़े होने पर इस प्रकार के अन्यायपूर्ण कार्य को बंद करने की कोशिश करना। तुम्हारा हृदय अच्छा है, तुम्हारा स्वभाव अभी दूषित नहीं हुआ है...खबरदार, सावधान हो जाओ। इस तरह की बातें बहुत दिन नहीं चल सकती।"

उस समय, जब मेरे नेत्रों से अश्रु प्रवाहित होकर मेरी नाक, होंठ और ठुड्ढी को भिगो रहे थे, मैंने लड़खड़ाते स्वर में कहा, "मैं याद रखूंगा", मैंने वादा किया, "मैं करूंगा-निश्चय करूंगा।"

किन्तु इसी समय पूनिन, जिसका मैंने इससे पहले बीसियों बार आलिंगन किया था (मेरे कपोल उसकी बढ़ी हुई दाढ़ी के संसर्ग से जल रहे थे और उसके शरीर की गंध भी मेरे शरीर में व्याप गई थी) एकाएक पागल जैसा हो गया। वह गाड़ी पर अपनी जगह से उछल पड़ा और दोनों हाथों को ऊपर उठाकर बहुत ही ऊंचे स्वर में निम्नलिखित भजन का पाठ करने लगा-

हे अखिलेश ! दीनजन रक्षक, सुनो हमारी टेर,

अत्याचारी बढ़े जगत में, करो न अब तुम देर।

आर्त्त स्वर से पीड़ित जनता तुमको रही पुकार।

बैबूरिन ने कहा, "बैठ जाओ, बैठ जाओ !"

पूनिन बैठ गया, पर फिर भी वह कहता ही रहा-

दुष्ट लोग करते ही जाते नितप्रति अत्याचार;

निरपराध दुखि:त जीवों का कौन करे उद्धार ?

'दुष्ट' शब्द का प्रयोग करते समय पूनिन ने मेरी दादी के महल की ओर इशारा किया और फिर गाड़ी हांकने वाले की पीठ में उंगली लगाता हुआ बोला-

आकर शीघ्र यहां उन दासों के बंधन दो काट;

ये अज्ञानी पीड़ित जन हैं इन्हें न सूझे बाट।

इसी समय मेरी दादी का कारिंदा निकोलाई ऐंटोनोव महल से बाहर निकला और उसने बड़े जोर-से चिल्लाकर गाड़ीवान से कहा, "चलो-चलो, भागो यहां से ! उल्लू कहीं का ! अभी तक क्यों ठहरा हुआ है ?"

गाड़ी चल दी, पर दूर से अब भी यह ध्वनि सुनाई पड़ रही थी-

हे जगदीश ! न्याय करने को आओ यहां तुरंत;

अन्यायी दल के अत्याचारों का करने अन्त।

अधिक कहां तक कहे ! हमारी यही प्रार्थना आज;

अखिल विश्व-मानव-समाज पर तेरा ही हो राज !

निकोलाई एंटोनोव ने कहा, "कैसा गंवार है!"

छोटे पादरी ने, जो उस समय मालकिन से यह दर्याफ्त करने आया था कि मालकिन साहिबा को रात की प्रार्थना के लिए कौन-सा समय उपयुक्त होगा, कहा, "मालूम होता है कि लड़कपन में इसकी पीठ पर डण्डे अच्छी तरह नहीं पड़े।"

उसी दिन मुझे यह मालूम हुआ कि यरमिल अभी तक गांव में ही है और कुछ कानूनी कार्रवाई करने के लिए दूसरे दिन सुबह से पहले शहर नहीं भेजा जायेगा। इन कानूनी विधियों का अभिप्राय तो यह था कि मालिकों की स्वेच्छाचारिता पूर्ण कार्यवाहियों पर नियंत्रण रखा जाय, पर उल्टे इससे उनकी निगरानी करने वालों को कुछ ऊपरी आमदनी हो जाया करती थी। मैंने यरमिल को ढूंढ निकाला और उसके पास पहुंचकर उसके हाथ में एक पुलिंदा रख दिया, जिसमें मैने दो जोड़ी रूमाल, एक जोड़ा स्लीपर-जूता, एक कंघी, एक पुराना रात में पहनने का चोगा और एक बिल्कुल नया रेशमी गुलूबंद बांध दिया गया था। रूपये-पैसे तो मेरे पास कुछ थे नहीं, जो उसे दे

देता। यरमिल को मुझे सोते से जगाना पड़ा। वह गाड़ी के पास पीछे के आंगन में पुआल के ढेर पर लेटा हुआ था। उसने मेरे उपहार को उदासीन भाव से, थोड़ी हिचकिचाहट के साथ, स्वीकार किया; पर उसने मुझे धन्यवाद भी नहीं दिया और फौरन अपने सिर को पुआल में छिपाकर फिर सो गया। मैं कुछ निराश-सा होकर घर लौटा। मैंने सोचा था कि वह मेरे आगमन पर विस्मित एवं प्रफुल्लित हो उठेगा और मेरे इस उपहार को भविष्य के लिए मेरे उदार संकल्पों की प्रतिज्ञा के रूप में देखेगा, किंतु इस सबकी जगह...

"आप चाहे जो कुछ कहें... किंतु इन लोगों में सहृदयता का अभाव है।" घर जाते हुए मेरे मन में यही विचार उठ रहा था।

मेरी दादी ने, किसी कारण वंश, मुझे उस दिन बिल्कुल निश्चिंत छोड़ दिया था। रात में खाना खा चुकने के बाद, जब मैं उसे नमस्कार करने आया तो उसने मेरी ओर संदिग्ध दृष्टि से देखा, फिर फ्रांसीसी भाषा में कहा, "तुम्हारी आंखे सुर्ख मालूम होती हैं और तुम्हारे शरीर में किसानों की झोंपड़ी की गंध आ रही है। तुम जो कुछ सोच रहे हो और कह रहे हो, उसकी मैं जांच-पड़ताल नहीं करूंगी। मैं तुम्हें दण्ड देने के लिए अपने को मजबूर नहीं करना चाहती, किंतु मुझे आशा है कि तुम अपनी सारी मुर्खता को छोड़ दोगे और एक बार फिर कुलीन घर के लड़के की तरह आचरण करने लगोगे। खैर, हम लोग शीघ्र मास्को वापस लौट रहे हैं। मै वहां तुम्हारे लिए एक शिक्षक नियुक्त कर दूंगी; क्योंकि मैं देखती हूं कि तुम्हें ठीक रास्ते पर लाने के लिए एक शक्तिशाली पुरूष की जरूरत है। अच्छा, इस समय जा सकते हो।"

इसके बाद दरअसल जल्दी ही हम लोग मास्को लौट गये।

2

1837

सात साल बीत गये। उस समय हम लोग पहले के समान ही मास्को में रहते थे। किंतु अब मैं एफ0ए0 के दूसरे साल का विद्यार्थी था और मेरी दादी की, जो गत कई वर्षों से प्रत्यक्ष रूप में वृद्धा जान पड़ने लगी थीं, हुकूमत का भार मेरे ऊपर अब पहले जैसा नहीं रह गया था। मेरे जितने साथी छात्र थे, उनमें टारहोव नामक एक सुशील एवं प्रसन्न-हृदय नवयुवक था, जिसके साथ मेरी घनिष्ठता हो गई थी। हम दोनों के स्वभाव और रूचि में समानता थी। टारहोव कविता-प्रेमी था और स्वयं भी कविताएं लिखा करता था। मेरे हृदय क्षेत्र में पूनिन ने कविता के जो बीज बोये थे, वे निष्फल नहीं गये। जैसा कि नवयुवकों में- जो आपस में जिगरी-दोस्त होते हैं- बहुधा हुआ करता है, हम दोनों में कोई बात ऐसी नहीं थी, जो गुप्त हो। किंतु आश्चर्य तो मुझे जब हुआ, जब मैने टारहोव में कुछ दिनों तक लगातार एक प्रकार की उत्तेजना और विक्षोभ का भाव देखा। एक दिन वह घंटो के लिए गायब हो गया और मुझे यह भी नहीं मालूम हुआ कि वह गया कहां। इस तरह की घटना इससे पहले कभी नहीं हुई थी। मै, एक मित्र के नाते उससे इसकी पूरी कैफियत मांगने जा रहा था पर मेरे इस भाव को वह पहले ही ताड़ गया।

एक दिन मैं उसके कमरे में बैठा हुआ था। वह अचानक आ गया और आनंदपूर्वक सकुचाते हुए तथा मेरे चेहरे की ओर देखते हुए बोला, "मैं अपनी कवितादेवी से तुम्हारा परिचय कराऊंगा।"

"तुम्हारी कवितादेवी ? किस अजीब ढंग से तुम बातें करते हो ? प्राचीन पंडितों की तरह। तुम्हारी कविता ?" मैंने इस ढंग से कहा, मानो मुझे इस विषय में कुछ भी पता न हो। "क्या तुमने कोई नई कविता लिखी है या और कुछ ?"

"तुम नहीं समझते कि मेरे कहने का आशय क्या है।" टारहोव ने अपने पूर्व कथन को दुहराते हुए कहा। अब तक वह हंस ही रहा था और सकुचाया हुआ भी था। " मैं एक सजीव कविता से तुम्हारा परिचय कराऊंगा।"

"अ-हा-हा ! अब आई समझ में ! किंतु वह तुम्हारी कैसे हुई ?"

"क्यों...चूंकि, अच्छा भाई, चुप ! मालूम होता है, देवीजी यहीं आ रही हैं।"

तेजी से चलती हुई पैरों की धीमी आवाज सुनाई पड़ी, दरवाजा खुला, और वहां अठारह वर्ष की एक बालिका आ उपस्थित हुई। वह छींट का एक सूती चोगा पहने हुई थी। कंधे पर एक काला कपड़ा पड़ा हुआ था और उसके सुन्दर घुंघराले बालों पर काले रंग की घास की टोपी शोभा पा रही थी। मुझे देखकर वह कुछ डर सी गई, घबराई और पीछे की ओर लौटना ही चाहती थी कि टारहोव फौरन दौड़कर उससे मिलने के लिए आगे बढ़ा।

"ओ देवी जी, कृपया भीतर पधारिये। यह मेरे एक बड़े दोस्त हैं, बड़े अच्छे आदमी हैं, बड़े विचारवान हैं। तुम इनसे डरो मत।" फिर मेरी ओर मुखातिब होकर उसने कहा, "आओ, तुम्हारा मैं अपनी मानसी से-मूसा पेवलोवना विनाग्राडोव से-परिचय कराऊं। आप मेरी एक अच्छी मित्र हैं।"

मैनें सिर झुकाकर उसका अभिवादन किया।

"आपका यह नाम...मानसी...?" मैंने कहना शुरू ही किया था कि टारहोव हंस पड़ा और बोला, "अहा ! तुम नहीं जानते कि पत्र में यह नाम भी पाया जाता है ! मैं भी उस वक्त तक नहीं जानता था जब तक इस युवती के साथ मेरी मुलाकात नहीं हुई। मानसी? कितना मोहक नाम है, और यह नाम इनको फबता भी खूब है।"

मैंने फिर अपने साथी के मित्र का अभिवादन किया। वह दरवाजे से हटकर दो कदम आगे आई और चुपचाप खड़ी हो गई। उसका रूप बड़ा आकर्षक था किंतु मैं टारहोव के मत से सहमत नहीं हो सका और मन ही मन सोचने लगा, "यह तो एक अजीब ढंग की कविता है।"

उसके गुलाबी चेहरे से सुकुमारता टपक रही थी और उसके अंग-प्रत्यंग से नवयौवन की उमंग फूटी पड़ती थी। पर कविता के संबंध में, कवितादेवी के मूर्तिमान स्वरूप के संबंध में, मेरी-और मेरी ही क्यों, उस समय के सब युवकों की-धारणा कुछ और ही थी। पहली बात तो यह थी कि कविता-कामिनी का कृष्णकेशी और पीतमुखी होना आवश्यक था। घृणाव्यंजन अहंकार की अभिव्यक्ति, तीक्ष्ण हास्य, उत्प्रेरित करने वाले कटाक्ष और एक प्रकार की रहस्यमयी पैशाचिक अदृष्टपूर्ण 'वस्तु'- ये बातें बायरन-शैली की कविता-कामिनी के लिए आवश्यक थीं। उस बालिका के मुखमंडल पर इस प्रकार का कोई भी भाव दिखाई नहीं देता था। यदि मैं कुछ और वयस्क और अनुभवी होता तो शायद मैं उसकी उन आंखों की ओर विशेष ध्यान देता, जो छोटी-छोटी होने पर भी सुगठित पलकों से भरी हुई, सुलेमानी पत्थर जैसी काली, चंचल एवं ज्योतिपूर्ण थीं। भूरे बाल वाली स्त्रियों में इस तरह की आंखें कदाचित ही देखी जाती हैं।

उसके उन लाल लोचनों के मायावी कटाक्षों में, जिनसे एक व्यग्र आत्मा के-इतनी व्यग्र कि वह आत्म-विस्मरण की अवस्था को प्राप्त हो चुकी थीं- लक्षण व्यक्त होते थे, संभव है कि मुझे कवित्वमयी प्रवृत्तियों का आभास न मिलता, पर उस समय मेरी उम्र बहुत कम थी। मैंने मानसी की ओर अपना हाथ बढ़ाया, किंतु उसने अपना हाथ मेरी ओर नहीं बढ़ाया। उसने मेरी इस क्रिया को देखा ही नहीं। वह उस कुर्सी पर बैठ गई, जिसे टारहोव ने उसके लिए वहां रख दिया था, लेकिन उसने अपनी टोपी और कंधे पर का कपड़ा नीचे नहीं उतारा।

वह देखने में कुछ बेचैन-सी मालूम पड़ती थी। मेरी उपस्थित ने तो उसे और भी व्यग्र बना दिया था। वह रह-रहकर इस प्रकार गहरी सांस लेती थी, मानो हांफ रही हो।

"ब्लाडीमीर निकोलेच, मैं तुम्हारे पास सिर्फ एक मिनट के लिए आई हूं," वह बोली। उसका कंठ स्वर कोमल एवं गम्भीर था, जो उसके बालोचित लाल अधरों से कुछ विस्मयजनक-सा प्रतीत होता था, "क्योंकि मेरी मां मुझे आधे घंटे से अधिक बाहर नहीं रहने देती। अभी परसों तुम अच्छे नहीं थे...इसलिए मैंने सोचा..."

इतना कहकर वह रूक गई और अपने सिर को नीचा कर लिया। उसकी घनी झुकी भौंहों के नीचे उसकी काली-काली आंखे इस प्रकार आगे-पीछे हो रही थीं, मानो वे छलपूर्वक तीर चला रहीं हों, जिस तरह मछलियां पानी में सट-से इधर-से-उधर चली जाती हैं।

"मानसी ! आपने बड़ी कृपा की !" टारहोव ने जोर से कहा, "किंतु थोड़ा तो और ठहरिये। अभी-अभी चाय आई जाती है।"

"नहीं, यह असम्भव है। मुझे अभी एक मिनट में यहां से चल देना है।"

"फिर भी थोड़ी देर सांस तो ले ही लीजिये। अभी तक आप जोर-जोर से हांफ रही हैं...और थकी भी तो हैं।"

"मैं थकी नहीं हूं। नहीं...ऐसी बात नहीं...सिर्फ...मुझे दूसरी किताब दो। मैंने इसे खत्म कर डाला।" उसने अपनी जेब से मास्को-संस्करण की एक फटी हुई सी मटमैली किताब निकाली।

"दूसरी किताब जरूर लीजिये, पर यह तो बताइये कि क्या आपको यह किताब पसंद आई?"

टारहोव ने मुझे संबोधित करते हुए कहा, "रोसलालेव नामक पुस्तक का जिक्र है।"

मानसी ने कहा, "हां, किन्तु मेरे विचार से 'यूरी मिलोस्लेवेस्की' इसकी अपेक्षा कहीं अच्छा है। मेरी मां पुस्तकों के संबंध में बहुत कठोर हैं वह कहा करती हैं कि पुस्तकों से हमारे काम में बाधा पड़ती है, क्योंकि उसके ख्याल से...

"किन्तु मैं कहता हूं कि 'यूरी मिलोस्लेवेस्की' की रचना पुश्किन के 'जिप्सी' के समान नहीं है ? है न मानसी ?"

"नहीं, सचमुच? जिप्सी..." उसने धीरे-धीरे गुनगुनाकर कहा, "हाँ एक बात और है, ब्लाडीमीर निकोलेच, कल आप मत आइये...आप जानते ही हैं कि कहां ?"

"क्यों?"

"यह असंभव है।"

"असंभव क्यों ?"

उस बालिका ने अपने कंधे को सिकोड़ लिया और एकाएक मानो उसे अचानक धक्का लगा हो, वह कुर्सी पर से उठ खड़ी हुई।

"क्यों, मानसी देवी!" टारहोव ने करूण स्वर में कहा, "कुछ देर तो और ठहरो।"

"नहीं, मैं ठहर नहीं सकती।" वह जल्दी से दरवाजे के पास गई और दरवाजा खोलने की मूठ को पकड़ा।

" अच्छा, कम-से-कम किताब तो लेती जाओ।"

"फिर कभी आऊंगी।"

टारहोव दौड़कर उस बालिका की ओर गया, किन्तु उस समय तक वह तीर की तरह कमरे से बाहर निकल गई थी। टारहोव की नाक दरवाजे से टकराती-टकराती बची। "क्या अजीब लड़की है ! यह तो सर्पिणी जैसी है।" उसने कुछ खिन्न-सा होकर कहा और फिर चिन्ता-मग्न हो गया। मैं टारहोव के यहां ही ठहरा रहा। इन सब घटनाओं का मैं रहस्य जानना चाहता था। टारहोव भी किसी बात को गुप्त रखना नहीं चाहता था। उसने मुझे बताया कि वह बालिका कपड़े सीने का काम करती है। उसने पहले-पहल उसे तीन सप्ताह पूर्व एक सजी हुई दुकान पर देखा था। उस दुकान पर टारहोव अपनी बहन के लिए, जो दूसरे प्रान्त में रहा करता थी, एक टोपी खरीदने गया था। उस बालिका को प्रथम बार देखकर ही टारहोव उसके प्रति प्रेमासक्त हो गया। दूसरे दिन वह उससे बातचीत करने में सफल हुआ और ऐसा मालूम होता था कि वह बालिका भी उसे कुछ-कुछ चाहने लगी है।

टारहोव आवेश के साथ बोला, "किंतु इतने से ही कुछ न मान बैठना। मेरे प्रति कोई बुरा भाव मन मे न लाना। अब तक हम दोनों के बीच किसी प्रकार की कोई बात नहीं हुई है।"

"बुरा भाव !" मैंने उसी की बात को बीच में ही काटकर कहा, "मुझे इस विषय में कोई संदेह नहीं हैं और मुझे इस बात में भी शक नहीं है कि तुम हृदय से बात पर खेद प्रकट करते हो ! किंतु धीरज रखो, सब बातें अपने आप ठीक हो जायेंगी।"

"मैं भी ऐसी ही आशा करता हूं।" टारहोव ने हंसते हुए बड़-बड़ाकर कहा।" किंतु सचमुच वह लड़की...मैं तुमसे सच कहता हूं...वह एक निराले ही ढंग की है। तुम्हे उसे अच्छी तरह देखने का मौका नहीं मिला। वह लज्जाशील है! अहा! इतनी लज्जा-शील! उसकी इच्छाशक्ति कितनी प्रबल है। किन्तु उसके इस लज्जा-भाव पर ही तो मैं मुग्ध हूं। यह स्वतंत्रता का लक्षण है। अजी, मैं बिल्कुल उसके प्रेम में डूबा हुआ हूं।"

टारहोव अपनी उस 'जादूगरनी' के संबंध में चर्चा करने लगा और 'मेरी कवितादेवी' शीर्षक वाली एक कविता का प्रारंभिक भाग भी उसने मुझे पढ़कर सुनाया। उसके उमंग पूर्ण हृदयोच्छ्वास मुझे उतने अच्छे नहीं लगे। मैं गुप्तरूप से उसके प्रति ईर्ष्यान्वित हो गया और शीघ्र वहां से चला आया।

कई दिनों के बाद मैं मास्को के एक बाजार में होकर गुजर रहा था। उस दिन शनिवार था। झुण्ड-के-झुण्ड लोग खरीद फरोख्त कर रहे थे। चारों ओर लोगों की धक्का-मुक्की के बीच दूकानदार जोर-जोर से पुकारकर ग्राहकों को सौदा करने के लिए कह रहे थे। जो कुछ मुझे खरीदना था, खरीदकर मैं जल्द-से-जल्दी उन दूकानदारों की तंग करने वाली मिन्नतों से छुटकारा पाने की सोच रहा था कि इतने में मैं आप-ही आप रुक गया | फलों की एक दूकान पर मैंने अपने दोस्त की जादूगरनी मानसी को देखा। वह मेरी बगल की ओर खड़ी थी और ऐसा मालूम होता था, मानो किसी की प्रतीक्षा कर रही हो। कुछ क्षणों की हिचकिचाहट के बाद मैंने उसके पास जाकर उससे बातचीत करने का निश्चय किया; किन्तु मैं दूकान के दरवाजे से होकर भीतर गया भी नहीं था और न अपनी टोपी उतारी थी कि इतने में वह उदास-सी होकर पीछे की ओर मुड़ी और जल्दी से एक बूढ़े आदमी की ओर, जो ऊनी लाबादा ओढ़े हुए था, घूम गई। उस समय उस बूढ़े को दूकानदार एक पौंड किशमिश तौलकर दे रहा था। उस लड़की ने बूढ़े की बांह पकड़ ली, मानो वह भागकर उसकी शरण में गई हो। उस बूढ़े ने पीछे की ओर मुड़कर उसे देखा। देखते ही मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। अरे! यह तो मेरा पूर्वपरिचित पूनिन है।

हां, वह जरूर पूनिन था। अब भी उसके वही ज्योतिर्मय नेत्र, मोटे अधर, कोमल नीचे की ओर झुकी हुई नाक-सब कुछ तो वही थे। इन सात वर्षों के अंदर उसमें बहुत कम परिवर्तन हुआ था। संभव है, उसका चेहरा कुछ शिथिल पड़ गया हो।

"निकंडर वेवीलिच !" मैं चिल्ला उठा, "क्या तुम मुझे नहीं पहचानते ?"

पूनिन चौंक उठा और मुंह फैलाकर मेरी ओर ताकने लगा...

"मैं आपको नहीं पहचानता," यह कहना उसने शुरू किया ही था कि वह एकाएक तीक्ष्ण स्वर में चीख उठा, " ट्राटस्की के छोटे बाबू ! (मेरी दादी की जायदाद ट्राटस्की नाम से मशहूर थी) क्या आप ट्राटस्की के छोटे बाबू तो नहीं हैं ?"

किशमिश उसके हाथ से नीचे गिर पड़ीं।

"हां, मैं ही हूं !" मैंने उत्तर दिया और किशमिश को जमीन से उठाकर उसे चूम लिया।

आनंद एवं उत्तेजना से अभिभूत वह बेदम सा हो रहा था। मालूम पड़ता था कि वह रो देगा। उसने अपनी टोपी उतार ली, जिससे मुझे अच्छी तरह मालूम हो गया कि उसके अंडाकार सफेद सिर में बाल के चिन्ह्र मात्र भी शेष नहीं रह गये हैं। उसने अपनी टोपी से रूमाल निकालकर नाक साफ की। किशमिश के साथ उस टोपी को उसने अपनी छाती में लटकाकर रखा। फिर उस टोपी को पहन लिया और किशमिश फिर उसके हाथ से नीचे गिर पड़ीं।

मैं नहीं कह सकता कि इतने समय में मानसी क्या कर रही थी, क्योंकि मैंने उसकी ओर देखने की चेष्टा ही नहीं की थी। मैं नहीं समझता कि पूनिन के इस आवेश का कारण मेरे प्रति अतिशय स्नेह था। इसका कारण यही था कि उसका स्वभाव किसी साधारण से साधारण अप्रत्याशित घटना का आघात सहन नहीं कर सकता था। गरीबों का स्वभाव ही यह हुआ करता है कि उनके मस्तिष्क जल्दी उत्तेजित हो जाते हैं।

"मेरे प्यारे लड़के, आओ, हमारे घर चलो।" उसने कम्पित स्वर में कहा, "तुम हमारी दीन कुटिया में आने में अपनी हेठी तो नहीं समझोगे ? अच्छा तुम तो अभी विद्यार्थी ही हो..."

"हेठी की क्या बात है ! मुझे तो इससे सचमुच बड़ी प्रसन्नता होगी।"

"अब तो तुम स्वतंत्र हो ?"

"बिल्कुल।"

" वाह भाई, खूब ! पारामन सेमोनिच को यह जानकर कितनी खुशी होगी ! आज वह और दिनों से पहले घर आयेगा और घर की मालकिन इस लड़की को भी शनिवार को छुट्टी दे देती हैं। हां क्षमा करो, मैं तो अपने को बिल्कुल भूल ही रहा था। तुम हमारी भतीजी को तो न जानते होगे ?"

मैंने फौरन उत्तर दिया कि अब तक मुझे उसे जानने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ है।

"ठीक-ठीक ! तुम उसे किस तरह जान सकते हो ! मानसी... महाशय, उस बालिका का नाम है... मानसी, मैं तुम्हारा मिस्टर... से परिचय कराना चाहता हूं...।"

मैंने अपना नाम झट से बतला दिया।

पूनिन ने मेरा नाम दोहराया, " मानसी, ध्यान देकर सुना, तुम जिस व्यक्ति को अपने सामने देखती हो, वह बहुत ही अच्छा खुशदिल नवयुवक है। भाग्यवश हम दोनों का उस समय संयोग हुआ था, जब ये छोटे थे। तुम इन्हें अपना मित्र समझो।"

मैंने झुकर अभिवादन किया। मानसी का मुखमंडल बिल्कुल फूल जैसा लाल हो उठा। उसने अपनी पलकों के नीचे से ही मेरी ओर कटाक्षपात किया और फिर फौरन उन पलकों को गिरा दिया।

"आह !" मैंने मन में सोचा, " तुम उन लड़कियों में से एक हो, जो कठिनाई की घड़ियों में भय से पीली नहीं पड़ती, बल्कि और भी निखर उठती हैं, यह बात खासकर ध्यान देने योग्य है।"

"तुम्हें इस पर जरा मेहरबान होना चाहिए, यह बहुत सभ्य बालिका नहीं है।" पूनिन ने कहा और वह दूकान के बाहर सड़क पर चला गया। मानसी और मैं दोनों उसके पीछे-पीछे हो लिये।

जिस मकान में पूनिन रहता था, वह बाजार से बहुत दूर था। रास्ते में मेरे भूतपूर्व काव्य-गुरू को अपने रहन-सहन के संबंध में बहुत-कुछ बातें मुझसे करने का समय मिल गया था। हम लोगों की जुदाई के बाद से पूनिन और बैबूरिन दोनों रूस में इधर-उधर मारे-मारे फिरते रहे और अभी एक वर्ष से अधिक नहीं हुआ था, जबकि उन्हें मास्कों में एक स्थायी निवास-स्थान मिला था। बैबूरिन एक धनी सौदागर और व्यवसायी के दफ्तर में हेडक्लर्क हो गया था। " कुछ तरक्की की गुंजायश यहां है नहीं," पूनिन ने गहरी सांस लेते हुए कहा, "काम बहुत है और पारिश्रमिक थोड़ा...पर किया क्या जाय? इतना भी मिल गया, यही शुक्र है। मैं भी इस बात की कोशिश कर रहा हूँ कि कापी नकल करके और दूसरों को कुछ पढ़ा-पढ़ा कर कुछ पैदा कर लिया करूं, पर अभी तक मेरे प्रयत्न सफल नहीं हुए। मेरी लिखावट, शायद तुम्हें याद होगा, पुराने ढंग की है जो आजकल की रूचि के प्रतिकूल है। रही ट्यूशन

की बात, सो सबसे बड़ी बाधा ठीक-ठीक पोशाक का अभाव है। इसके सिवाय मुझे इस बात का भी बहुत डर है कि शिक्षा देने में-रूसी साहित्य के विषय में-आधुनिक रूचि के अनुकूल नही हूं और इसलिए मैं निकाल दिया जाता हूं।" पूनिन ने हंसी रोकने की चेष्टा की, पर उसे कुछ हंसी आ ही गई। उसमें पहले जैसी पुरानी और कुछ-कुछ धाराप्रवाह वाणी तथा बोलते-बोलते कविता पर बैठने की दुर्बलता अब भी बनी हुई थी। थोड़ा रूककर उसने कहा, " सब लोग नई बातों की ओर दौड़ा करते हैं-नवीनता के सिवा और कुछ चाहते ही नहीं।"

'नई नवेलिनि छांड़ि भला को लखे पुरानी ! '

मैं तो यहां तक कहूंगा कि तुम भी प्राचीन देवताओं के उपासक नहीं होगे और नवीन मूर्तियों के सामने श्रद्धा से नतमस्तक हो जाते होगे ?"

"अच्छा, निकेंडर वेवीलिच, यह तो बतलाओ कि क्या अब भी तुम सचमुच हेरास्कोव की रचनाओं की कद्र करते हो ?" पूनिन शान्त भाव से खड़ा रहा और फिर उसने अपने दोनों हाथों को फौरन हिलाते हुए कहा, "मैं बहुत ज्यादा उसकी कद्र करता हूं जनाब ! जी हां, पहले से भी कहीं ज्यादा।"

"तुम पुश्किन की रचनाओं को तो नहीं पढ़ते होंगे? तुम्हें पुश्किन भला क्यों लगा !" पूनिन फिर अपने हाथों को सिर से ऊपर उठाकर बोला।

"पुश्किन ? पुश्किन एक सांप की तरह है, जो घास के अंदर छिपा रहता है और जिसका स्वर बुलबुल जैसा मीठा है।"

जब हम दोनों इस तरह बातें करते हुए मास्को शहर की सड़क पर से होकर जा रहे थे, मानसी हमारी बगल में, कुछ दूर हटकर, धीरे-धीरे चल रही थी। पूनिन से उसके विषय में चर्चा करते हुए मैं उसे 'आपकी भतीजी' नाम से संबोधित कर रहा था। पूनिन कुछ देर तक चुप रहा, फिर सिर खुजलाते हुए उसने दबी जबान में बतलाया, "मै इसे यों ही शिष्टाचार में भतीजी' कहा करता हूं, वास्तव में मानसी से मेरा कोई संबंध नहीं है। बैबूरिन को यह एक अनाथ बालिका के रूप में बोरोनेज शहर में मिली थी और उसी ने इसे पाल-पोसकर बड़ा किया है। मैं इसे अपनी लड़की भी कह सकता हूं, क्योंकि मैं इसे अपनी सगी लड़की से कम प्यार नहीं करता।"

मुझे इसमें जरा भी शक नहीं था कि यद्‌यपि पूनिन ने जान-बूझकर दबी जबान में ये बाते कही थीं, लेकिन फिर भी मानसी ने उसकी सारी बातों को सुन लिया। यह सब सुनकर तत्काल वह क्रुद्ध, लज्जित एवं हतप्रभ-सी हो गईं। उसके चेहरे पर बारी-बारी से इन भावों की रेखाएं दौड़ गईं और उसके पलक, भौंह, होंठ और नथुने कुछ-कुछ कांपने से लग गये। उसकी यह भाव-भंगिमा बड़ी ही मनोहर, आनंददायक एवं विलक्षण जान पड़ती थी।

आखिर हम लोग उस 'दीन कुटिया' में पहुंचे और सचमुच यह कुटिया दीन ही थी। वह एक छोटा सा इकतल्ला मकान था, जो ऐसा मालूम पड़ता था, मानों जमीन में धंसा जा रहा हो। उसकी छत लकड़ी की और झुकी हुई थी तथा सामने के हिस्से में चार तंग खिड़कियां थीं। कमरों का समान बिल्कुल गरीबी के ढंग का था और वह साफ-सुथरा भी न था। खिड़कियों के बीच दीवारों पर लगभग एक दर्जन छोटे-छोटे काठ के पिंजड़े लटक रहे थे, जिनमें लार्क, कैनारी और सिस्किन पक्षी बंद थे।

"मेरे अध्ययन के विषय !" पूनिन ने उन पक्षियों की ओर अंगुली से इशारा करते हुए विजयोल्लास-सूचक स्वर में कहा। हम लोग मुश्किल से घर के भीतर गये होंगे और इधर-उधर देख भी नहीं पाये थे और पूनिन ने मानसी को चाय का प्याला लाने के लिए अभी भेजा ही था कि इतने में बैबूरिन खुद वहां पहुंच गया। वह मुझे पूनिन से भी वृद्ध मालूम हुआ, यद्यपि उसकी चाल-ढाल में अब भी पहले जैसी ही दृढ़ता थी और उसके मुखमंडल की अभिव्यक्ति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ था, पर इतने में वह दुबला-पतला हो गया था और झुक गया था। उसके गालों में गड्ढ़े पड़ गये थे और घने काले केशों में कहीं-कहीं सफेदी भी आ गई थी। उसने मुझे पहचाना भी या नहीं, इसे प्रकट नहीं किया। वह अपनी आंखों से मुस्कराया भी नहीं, सिर्फ अपना सिर हिला दिया। उसने मुझसे रूखे स्वर में लापरवाही के साथ पूछा, "क्या दादी जीवित है ?" बस, इतनी बात के सिवा वह और कुछ नहीं बोला। "मैं किसी रईस के आने पर विशेष प्रसन्न नहीं होता," उसके चेहरे से यही भाव टपकता था, मानो वह कह रहा था, " मैं इसे अपना सौभाग्य नही समझता।" सो प्रजातंत्रवादी बैबूरिन इस समय भी वही प्रजातंत्र वादी बना हुआ था।

मानसी वापस आई और उसके साथ-साथ एक नाटी-सी दुर्बल वृद्धा भी वहां आई, जिसके हाथ में एक दाग पड़ा हुआ पुराना चाय का प्याला था। पूनिन इधर-उधर दौड़-धूप करने लगा और मुझसे खाने के लिए आग्रह करने लगा। बैबूरिन मेज के पास बैठ गया और अपने सिर को हाथों के सहारे कर लिया। वह थकी-मांदी आंखों से इधर-उधर देखने लगा, किन्तु चाय पीने के समय उसने बातचीत करना शुरू कर दिया। वह अपनी वर्तमान स्थिति से असंतुष्ट था। वह अपने मालिक को मनुष्य नहीं, एक 'रक्त-शोषक जीव' के रूप में समझता था। "निम्न श्रेणी के कर्मचारी उसके लिए कूड़े-करकट के सिवा और कुछ है ही नहीं। उसकी दृष्टि में उनकी कोई हस्ती ही नहीं, हालांकि वह खुद कुछ समय पहले इसी श्रेणी के बंधन में बंधा था। क्रूरता एवं लोलुपता के सिवा वह और कुछ जानता ही नहीं। यह परवशता सरकार की परवशता से भी बुरी है। यहां के सारे व्यापार ठगी पर चलते हैं और एकमात्र इसी के सहारे वे फूलते-फलते हैं।" इस प्रकार की निराशाजनक उक्तियों को सुनकर पूनिन ने प्रत्यक्ष रूप में गहरी सांस ली और अपनी स्वीकृति प्रकट की। फिर वह अपने सिर को नीचे-ऊपर और अगल-बगल हिलाने लगा। मानसी इस समय बिल्कुल निस्तब्ध बनी हुई थी। मेरे बारे में उसे शक था, " क्या यह कोई बुद्धिमान आदमी है या निरा बकवासी ?" इस विचार के कारण वह चिढ़ी हुई जान पड़ती थी। उसकी अर्धनिमीलित पलकों के नीचे उसके काले चंचल नेत्र आगे-पीछे स्फुरित हो रहे थे। सिर्फ एक बार उसने मेरी ओर देखा होगा, किंतु उसकी उस दृष्टि में जिज्ञासा थी, अनुसंधान था, और दुष्टता थी... मैं खुद भी चकित हो रहा था। बैबूरिन कदाचित ही उससे कभी कुछ बोलता था, किंतु जब कभी वह उसे पुकारता था, उसकी आवाज में वात्सल्य भरी कोमलता के बदले कठोरता-सी ही मालूम पड़ती थी।

इसके विपरित पूनिन मानसी के साथ बराबर मजाक कर रहा था, वह उसका जवाब इच्छा न रहते हुए भी दिया करती थी। पूनिन उसे छोटी 'हिमकुमारी', 'लघुहिम-कुण्ड' कहता था।

"तुम मानसी को इन नामों से क्यों पुकारते हो ?" मैंने पूछा।

पूनिन हंस पड़ा। बोला, "क्योंकि वह ऐसी ही एक छोटी सर्द चीज है।"

"होश में आओ और ऐसे बोलो", बैबूरिन ने कहा, "जैसा कि एक नवयुवती के लिए उपयुक्त है।"

"हम उसे घर की मालकिन कह सकते हैं।" पूनिन बोल उठा, "क्यों भाई परोमन सेमोनिच?" बैबूरिन ने अपनी त्यौरी बदली। मानसी वहां से खिसक गई। मैंने उस समय उसके इस इशारे को नहीं समझा।

इसी तरह दो घण्टे ज्यों-त्यों बीत गये। इस बीच पूनिन ने इस सम्माननीय गोष्ठी को प्रसन्न करने का भरसक प्रयत्न किया। मसलन वह एक कनारी पंक्षी के पिंजड़े के सामने जमीन पर बैठ गया और पिंजड़े के दरवाजे को खोलकर पुकारा, "आओ, गुम्बद पर बैठ जाओ। गाना शुरू कर दो।" कनारी फौरन पिंजड़े से फड़फड़ाकर बाहर निकल आई और गुम्बद पर बैठ गई। वह गुम्बद पूनिन के गंजे सिर के सिवा और कुछ न थी। उस पर बैठकर एक तरफ से दूसरी तरफ झूमती हुई और अपने नन्हें-नन्हें पंखों को झुलाती हुई उसने पूरे जोश खरोश के साथ गाना शुरू किया। जब तक यह गाना होता रहा, पूनिन बिल्कुल निश्चल बना हुआ बैठा रहा। सिर्फ वह अपनी आंखों को आधा मूंदे हुए अंगुली से इशारा करता जाता था। मैं यह सब देखकर हंसी नहीं रोक सका, किंतु बैबूरिन या मानसी किसी को जरा भी हंसी नहीं आई।

जब मैं वहां से विदा हो रहा था, ठीक उसी समय बैबूरिन ने एक प्रश्न पूछकर, जिसकी मुझे कोई आशा न थी, मुझे आश्चर्य में डाल दिया। उसने कहा, "आप तो विश्वविद्यालय के छात्र हैं। मैं जानना चाहता हूं कि 'जीनो' किस किस्म का आदमी था और उसके संबंध में आपके क्या विचार हैं?"

'जीनो ? कौन जीनो?" मैंने कुछ घबराकर पूछा।

"प्राचीन काल का संत जीनों। आप अवश्य ही इस नाम से अपरिचित न होंगे ?"

स्टोयिक-पंथ (वैराग्यवाद) के प्रतिष्ठापक के रूप में जीनो का नाम मुझे कुछ-कुछ स्मरण हो आया। किंतु मैं इससे अधिक उसके संबंध में रत्ती भर भी नहीं जानता था।

"हां, वह एक दार्शनिक था।" मैंने कहा।

"जीनो", बैबूरिन ने विचारपूर्ण स्वर में फिर कहना शुरू किया, "एक ऐसा बुद्धिमान मनुष्य था, जिसका कथन था कि कष्ट सहन करना कोई पाप नहीं है, क्योंकि सहनशीलता सभी वस्तुओं पर विजय प्राप्त करती है, और इस संसार में अच्छी चीज एक ही है, वह है न्याय। पुण्य भी न्याय के सिवा और कुछ नहीं है।"

पूनिन श्रद्धापूर्वक इन बातों को सुन रहा था।

बैबूरिन कहता गया, "एक आदमी ने, जो यहां रहता था और जिसने बहुत-सी पुरानी किताबें संग्रह कर रखी थीं, मुझे यह उपदेश बताया था और इससे मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। किन्तु मैं देखता हूं कि तुम्हें इन विषयों में दिलचस्पी नहीं मालूम होती।"

बैबूरिन का कहना ठीक था। इन विषयों में निश्चय ही मेरी रूचि नहीं थी। जब से मैंने विश्वविद्यालय में प्रवेश किया था, मैं उसी प्रकार प्रजातंत्रवादी बन गया था, जैसा कि बैबूरिन। मिराबो और रोब्सपीयर के संबंध में मैं पूरी दिलचस्पी के साथ बातें करता, खासकर रोब्सपीयर...! मेरे लिखने की मेज के ऊपर फोकियर टिनवेली और चेलियर की तस्वीरें लटक रही थीं। किन्तु जीनो ? जीनो कहां से बीच में आ कूदा ! मुझे विदा करते हुए पूनिन ने मुझसे आग्रह किया कि कल रविवार को फिर हमारे घर आना। बैबूरिन ने मुझे आने के लिए निमंत्रण नहीं दिया,

बल्कि घुनघुनाकर बोला, "सीधे-सादे अज्ञात कुलशील मनुष्यों से बातें करना आप जैसे आदमी के लिए विशेष आनन्ददायक नहीं हो सकता और खासकर आपकी दादी को तो यह बिल्कुल पसंद नहीं आयेगा।" किन्तु दादी का नाम लेने पर मैंने उसे रोक दिया और बतला दिया कि दादी का अब मुझ पर कुछ भी अनुशासन नहीं रह गया है।

"क्यों? सम्पत्ति पर तुम्हारा अधिकार नहीं हुआ है ?" बैबूरिन ने पूछा।

"हां, मेरा अधिकार नहीं हुआ है।" मैने उत्तर दिया।

"तब तो इसका मतलब यह है कि..." बैबूरिन ने अपने वाक्य को पूरा नहीं किया, किन्तु उसके बदले मन-ही-मन मैंने उसे यों पूरा कर लिया, "इसका अभिप्राय यह है कि अभी तुम निरे बालक हो।" मैं जोर-से प्रणाम कहकर वहां से चल दिया।

आंगन से बाहर निकलकर सड़क पर जा ही रहा था कि मानसी एकाएक घर से दौड़कर बाहर आई और मुड़े हुए कागज का एक टुकड़ा मेरे हाथ में रखकर फौरन गायब हो गई। आगे सड़क पर लैम्प के खम्भे के पास मैंने उस कागज को खोला। उसमें कुछ लिखा था। बड़ी कठिनाई से मैंने पेन्सिल से लिखे हुए धुंधले अक्षरों को पढ़ा। "ईश्वर के नाम पर," -मानसी ने लिखा था- "कल प्रात: काल की प्रार्थना के बाद कुटाफिआ लाट के पास एलेकजंड्रोवेस्की बाग में आना मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूंगी आने से इन्कार करके मुझे दुखी न करना, मुझे तुमसे बहुत जरूरी मिलना है।"

इस पुर्जे के शब्दों के हिज्जे में कोई गलती नहीं थी, किन्तु उसमें कहीं कोई विराम-चिन्ह नहीं था। मैं हैरत में पड़ा हुआ घर आया।

दूसरे दिन निश्चित समय से पंद्रह मिनट पूर्व जब मैं कुटाफिआ लाट के नजदीक पहुंच रहा था (अप्रैल का महीना था, कलियां चटक रहीं थी, हरी-भरी घास चारों ओर दीख पड़ती थी और बकाइन की झाडियों के अंदर चिड़ियां चहचहा रहीं थीं और आपस में लड़-झगड़ रहीं थीं) कि इतने में घेरे से कुछ दूर पर एक तरफ मानसी को देखकर मैं बहुत विस्मित हुआ। वह मेरे आने से पहले ही वहां पहुंच गई थी। मै उसकी तरफ बढ़ा, किन्तु वह खुद ही मेरे पास आ पहुंची।

"चलो, हम क्रेमल दीवार के पास चलें।" उसने अपनी आंखों को नीचे की ओर करके जमीन पर नजर दौड़ाते हुए तेजी से मेरे कान में कहा, "यहां बहुत-से लोग हैं।"

हम दोनों रास्ते से होकर पहाड़ी पर गये।

"मानसी," मैंने कहना शुरू ही किया था...किन्तु उसने फौरन मेरी बात को बीच ही में काट दिया और पहले के समान उसी अधीरतापूर्ण दबी हुई जबान में कहना शुरू किया, "कृपया मेरी आलोचना मत करो और न मेरे संबंध में किसी बात का ख्याल ही अपने मन में लाओ। मैंने तुमको पत्र लिखा और तुमसे मिलने के लिए समय निश्चित किया, क्योंकि...मुझे भय हो रहा था...कल मुझे ऐसा मालूम पड़ता था-तुम तमाम दिन हंसते हुए से मालूम पड़ रहे थे। ध्यान देकर सुनो।" उसने फिर जोर देकर कहा और मेरी तरफ मुखातिब होती हुई बोली, "सुनो, अगर तुम इस

बात का किसी से जिक्र करोगे कि किसके साथ और किस आदमी के कमरे में मेरे साथ तुम्हारी मुलाकात हुई थी तो मैं पानी में कूद पड़ूंगी और डूब कर मर जाऊंगीं। मै अपने जीवन का अन्त कर डालूंगीं।"

इसी समय उसने पहले-पहल जिज्ञासा भरी, चुभने वाली दृष्टि से मुझे देखा।

"कहीं ऐसा न हो कि यह सचमुच ही ऐसा कर डाले !" यही विचार उस समय मेरे मन में आया।

"मानसी देवी," मैंने शीघ्र ही उसके कथन का प्रतिवाद करते हुए कहा, "तुमने मेरे संबंध में इस तरह की बुरी राय कैसे कायम कर ली ? क्या तुम समझती हो कि मैं अपने मित्र के साथ विश्वासघात कर सकता हूं और तुम्हारा अनिष्ट कर सकता हूं ? इसके अलावा, एक बात और भी तो है, तुम दोनों के बीच, जहां तक मैं जानता हूं, कोई ऐसा संबंध भी नहीं है, जो निंदनीय हो। कृपा कर इसके लिए तुम निश्चिंत रहो।"

मानसी वहां खड़ी-खड़ी मेरी तरफ निगाह डाले बिना ही मेरी बातों को सुनती गई।

"मुझे तुमसे कुछ और भी बातें कहनी हैं।" उसने फिर रास्ते पर आगे बढ़ते हुए कहना शुरू किया, "तुम शायद यह न समझ लो कि मैं निरी पगली हूं। मैं तुमसे यह भी कह देना चाहती हूं कि वह बूढ़ा आदमी मुझसे शादी करना चाहता है।"

"कौन बूढ़ा आदमी ? वही गंजा, पूनिन ?"

"नहीं, वह नहीं। दूसरा...परोमन सेमोनिच।"

"बैबूरिन ?"

"हां।"

"क्या यह संभव है ? उसने तुमसे यह प्रस्ताव किया है ?'

"हां।"

"किन्तु तुमने स्वीकार तो नहीं किया होगा ?"

"हां, मैंने स्वीकार कर लिया था, क्योंकि उस समय मैं इस मामले को समझ नहीं सकी थी। अब वह बात बिल्कुल नहीं रही।"

मैंने अपने हाथों को ऊपर उठाकर आश्चर्य-चकित भाव में कहा, "बैबूरिन और तुम ? क्यों? उसकी उम्र तो पचास से कम नहीं होगी।"

"वह अपनी उम्र तेतालीस साल बतलाता है। किन्तु इससे क्या ? अगर वह पच्चीस वर्ष का होता तो भी मैं उसके साथ शादी नहीं करती। उसके साथ मुझे क्या आनंद प्राप्त हो सकता है ? सारे-का-सारा हफ्ता बीत जाता है और इस बीच एक बार उसके मुख पर मुस्कराहट नहीं दीख पड़ती। परोमन सेमोनिच मेरा उपकारकर्ता है, मैं उसकी अत्यंत ऋणी हूं। उसने मुझे पाला-पोसा, पढ़ाया-लिखाया है। यदि वह न होता तो मैं बिल्कुल नष्ट हो गई होती।

इसलिए वह लाजिमी है कि मैं उसे पिता की दृष्टि से देखूं।...किन्तु उसकी पत्नी बनकर रहना ! इससे तो मर जाना अच्छा है। सर पर कफन लपेट लेना बेहतर है।"

"मानसी देवी, तुम हमेशा मृत्यु के संबंध में क्यों बातें करती रहती हो ?"

मानसी फिर रूक गई।

"तो क्या सचमुच जीवन इतना मधुर है? मन न लगने की वजह से शुष्क जीवन के कारण मैं तुम्हारे दोस्त पूनिन को भी प्यार करने लगी हूं। फिर बैबूरिन और उसका विवाह संबंधी प्रस्ताव! पूनिन, यद्यपि अपनी कविताओं से मेरा सिर दुखा डालता है, किन्तु वह मुझे किसी तरह भयभीत तो नहीं करता। वह संध्याकाल में, जब मैं थककर सोने की इच्छा करती हूं, मुझे करामजिन पढ़ने के लिए बाध्य तो नहीं करता है। और यह बूढ़ा मेरे लिए क्या है ? वह मुझे प्रेमहीन बतलाता है ! क्या यह संभव है कि मैं उसके साथ रहकर प्रेम-युक्त बन सकूं ? यदि वह मुझे ऐसा बनाने की कोशिश करेगा तो मैं कहीं चल दूंगी। बैबूरिन खुद हमेशा कहता रहता है, 'स्वतंत्रता, स्वतंत्रता!' ठीक है, मैं भी तो स्वतंत्रता चाहती हूं, नहीं तो फिर उसके कथन का यही अर्थ हो सकता है कि और सबके लिए तो स्वतंत्रता और मुझे पिंजड़े में बन्द करके रखना- मेरे लिए परतंत्रता। मैं उससे खुद ऐसा कहूंगी। किन्तु यदि तुम मेरे साथ विश्वासघात करोगे या उस बात का इशारा भी करोगे तो याद रखो कि वे लोग फिर कभी मुझे नहीं देख पायेंगे।"

मानसी रास्ते के बीच में खड़ी हो गई।

"वे लोग फिर कभी भी मुझे नहीं देख पायेंगे।" उसने फिर इस बात को तेजी के साथ दुहराया। इस बार भी उसने ऑख उठाकर नहीं देखा। ऐसा प्रतीत होता था कि उसे इस बात का ज्ञान है कि यदि कोई उसके चेहरे की ओर सामने से देख लेगा तो वह अपने को छिपा नहीं सकेगी, देखने वाला उसके दिल की बात ताड़ जायेगा। और ठीक यही कारण था, जिसने वह क्रुद्ध अथवा खिन्न होने के सिवा- जबकि वह बातचीत करने वाले के चेहरे की ओर सीधे टकटकी लगाकर देखा करती थी-और किसी वक्त अपनी आंखों को ऊपर नहीं उठाती थी, किन्तु उसका छोटा खूबसूरत चेहरा अदम्य संकल्प से प्रदीप्त हो रहा था।

उस समय यह विचार मेरे मन में आया, "टारहोव का कहना बिल्कुल दुरूस्त था। यह लड़की सचमुच एक नये ढंग की है।"

"तुम्हें मुझसे डरना नहीं चाहिए।" मैंने आखिर उससे कहा।

"सचमुच ? यदि तुम हम दोनों के संबंध में कुछ कह भी दो...लेकिन यदि कुछ होता भी..." इससे आगे वह नहीं बोल सकी।

"उस हालत में तुम्हें मुझसे नहीं डरना चाहिए। मानसी, मैं तुम्हारा न्यायाधीश नहीं हूं। तुम्हारा गुप्त रहस्य मेरे हृदय में छिपा है।" मैंने अपने हृदय की तरफ इशारा करके कहा। मुझ पर विश्वास रखो, मैं दूसरों की कद्र करना अच्छी तरह जानता हूं...।"

"क्या मेरा वह पत्र तुम्हारे पास है ?" मानसी एकाएक पूछ बैठी।

"हां।"

"कहा है ?"

"मेरी जेब में।"

"लाओ, मुझे दे दो...तुरन्त।"

मैंने कागज के टुकड़े को जेब से बाहर निकाला। मानसी ने उसे मेरे हाथ से छीनकर अपने रूखे छोटे हाथों में ले लिया। वह मेरे सामने एक क्षण तक चुपचाप खड़ी रही, मानो वह मुझे धन्यवाद देना चाहती हो। किन्तु वह अचानक चौंक पड़ी, चारों ओर देखने लगी और विदा होते समय एक शब्द भी कहे बिना ही दौड़कर पहाड़ी के नीचे चली गई। जिस दिशा की ओर वह गई थी, उधर ही मैंने नजर दौड़ाई। लाट से कुछ ही दूर पर मेरी दृष्टि एक मनुष्य पर पड़ी, जिसे मैंने फौरन पहचान लिया। वह टारहोव था।"अहा मेरे दोस्त", मैंने सोचा, "तुम्हें इसकी सूचना जरूर मिली होगी, तभी तो तुम पहले से ही इसकी ताक में थे !"

फिर मैं धीमे-धीमे सीटी बजाता हुआ वहां से घर की तरफ चल पड़ा।

दूसरे दिन प्रात:काल मैं चाय पीकर बैठा ही था कि इतने में पूनिन आ पहुंचा। वह परेशान चेहरा बनाये हुए मेरे कमरे में दाखिल हुआ और झुककर सलाम किया। वह इधर-उधर देखने लगा और इस प्रकार बिना इजाजत कमरे में दाखिल होने के लिए क्षमा-याचना करने लगा। मैंने शीघ्र ही उसे आश्वासन दिलाया कि ऐसी कोई बात नहीं है। मेरे मन का चोर तो देखिये कि मेरे दिल में यह ख्याल आया कि हो-न-हो, पूनिन मुझसे रूपया उधार लेने का इरादा करके आया है। किन्तु उसने सिर्फ थोड़ी-सी शराब सहित चाय का एक प्याला मांगा। संयोगवश चाय का बर्तन उस समय मौजूद था, हटाया नहीं गया था। "घबराहट और पस्तदिली के साथ मैं तुमसे मिलने आया हूं", उसने थोड़ी-सी चीनी लेते हुए कहा, "तुमसे तो मैं भय नहीं करता, किन्तु तुम्हारी सम्माननीया दादी से मैं डरता हूं। मुझे अपनी पोशाक पर भी संकोच होता है, जैसा कि मैंने तुमसे पहले कह दिया है।" पूनिन ने अपने जीर्ण कोट के उड़े हुए किनारे पर अंगुली रखते हुए कहा, "घर पर इस तरह के फटे-पुराने कपड़े पहने रहने में कोई हर्ज नहीं, राह चलते सड़कों पर भी पहने जा सकते हैं। किन्तु जब किसी स्वर्ण-मंडित राजमहल में जाना पड़ता है, उस समय दरिद्रता का नग्न रूप दिखाई देने लगता है और घबराहट मालूम होने लगती है।"

मैं मकान के नीचे के तल्ले के दो छोटे-छोटे कमरों में रहा करता था। इन कमरों को देखकर कोई भी उन्हें राजमहल नहीं कह सकता था, स्वर्ण-मंडित होने की बात तो दूर रही। किन्तु पूनिन के इस कथन का अभिप्राय मेरी दादी के संपूर्ण मकान से था, यद्यपि वह भी कुछ विशेष सजा-धजा नहीं था। मैं पिछले दिन उन लोगों के घर मिलने नहीं गया, इसलिए पूनिन ने मुझे उलाहना दिया, "बैबूरिन तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा था, यद्यपि उसने कह दिया था कि तुम निश्चय ही नहीं आओगे और मानसी भी तुम्हारी इंतजार में थी।"

"क्या कहा, मानसी भी ?" मैंने पूछा।

"हां, वह भी। हमारे साथ जो वह लड़की है, वह बड़ी मनोहारणी है। है न ? तुम क्या समझते हो ?"

"सचमुच मनोहारिणी है।" मैंने अपनी स्वीकृति दी।

पूनिन अपने नंगे सिर को खूब जोर-जोर से रगड़ने लगा। "जनाब, वह सौन्दर्य की मूर्ति हैं, मोती है, या यों कहिये कि हीरा है। यह सब जो मैं आपसे कह रहा हूं, वह बिल्कुल सच है।" वह झुककर कान के पास आ गया और धीमें स्वर में कहने लगा, "वंश भी अच्छा है, सिर्फ तुम इतना समझ रखो कि उसका जन्म जायज माता-पिता से नहीं हुआ था। उसके मां-बाप मर गये, उसके संबंधियों ने उसकी कोई खबर नहीं ली और उसे बिल्कुल भाग्य भरोसे छोड़ दिया, अर्थात् हताश होकर उसे भूखों मरने दिया। किन्तु इसी समय बैबूरिन, जो बहुत दिनों से दुखियों का त्राता समझा जाता है, आगे बढ़ा। वह उस लड़की को अपने यहां ले आया, उसे अन्न वस्त्र देकर यत्नपूर्वक पाला-पोसा और बड़ा किया और अब वह बढ़कर हम लोगों की प्रिय पात्र बन गई है। मैं तुमसे कहता हूं, बैबूरिन में अपूर्व गुण हैं।"

पूनिन आराम कुर्सी पर लेट गया, उसने अपने हाथों को ऊपर उठाया और फिर आगे झुककर मेरे कानों में धीरे-धीरे, किन्तु पहले से भी अधिक रहस्यपूर्ण भाव में कहना शुरू किया, "तुम भी तो बैबूरिन को देखते हो। क्या तुम नहीं जानते हो ? वह भी उच्च वंश का है...किन्तु उसका जन्म भी जायज माता-पिता से नहीं हुआ था। कहते हैं, उसका पिता राजा डेविड के कुल का एक शक्तिशाली जार्जवंशीय नरेश था... इससे तुम क्या समझते हो? चन्द शब्दों में ही कितनी बातें कह दी गई है? राजा डेविड के कुल का रक्त! इस संबंध में तुम्हारा क्या ख्याल है? दूसरी दूतवृत्ति के अनुसार बैबूरिन के वंश का प्रतिष्ठापक एक हिन्दुस्तानी बादशाह बाबर था। महान उच्च वंश का रक्त! क्या कहना है ।"

"अच्छा !" मैंने पूछा, " यह तो बताओ कि क्या बैबूरिन भी भाग्य के भरोसे छोड़ दिया गया था?"

पूनिन ने फिर अपनी खोपड़ी खुजलाई, "हां, वह भी छोड़ दिया गया था और सो भी हमारी उस छोटी लड़की की अपेक्षा अधिक क्रूरता के साथ। अपने जीवन की बाल्यावस्था से ही उसे कठिनाइयों के साथ संग्राम करना पड़ा है और वस्तुतः मैं यह स्वीकार करूंगा कि रूबन की कविता से अनुप्राणित होकर मैंने बैबूरिन का चित्र चित्रित करने के लिए जिस पद की रचना की थी, उसमें इस बात का जिक्र कर दिया था। ठहरो जरा... वह पद कैसा था ? हां सुनो-

दुखः और दुर्भाग्य निरन्तर करते रहते थे आघात।

कष्टों की अथाह खाई में देखा उसने जीवन-प्रात

किन्तु चीरकर अन्धकार को रवि का ज्यों प्रकाश गंभीर

विजयमाल को लिये भाल में आया वह बैबूरिन वीर।

पूनिन ने इन पंक्तियों को स्वर-ताल-युक्त संगीत-स्वर में जैसा कि कविता-पाठ होना चाहिए, पढ़कर सुनाया।

"सो इससे ही मालूम होता है कि वह किस प्रकार एक प्रजातंत्रवादी है!" मैं बोल उठा।

"नहीं, यह कारण नहीं है," पूनिन ने उत्तर दिया, "बहुत दिन हुए उसने अपने पिता को क्षमा कर दिया, किन्तु वह किसी भी तरह का अन्याय सहन नहीं कर सकता। दूसरे के दु:खों को देखकर वह विचलित हुए बिना नहीं रह सकता।"

कल मानसी से मैंने जो बात सुनी थी, अर्थात् बैबूरिन के विवाह-विषयक प्रस्ताव के संबंध में, उसी का जिक्र इस बातचीत में मैं लाना चाहता था, पर मैं समझ नहीं पाता था कि इस प्रसंग को किस तरह छेड़ा जाय। आखिर पूनिन ने खुद ही मुझे इस कठिनाई से निकाल दिया।

"कल जबकि तुम हम लोगों के साथ थे, क्या तुम्हें कोई खास बात नहीं दीख पड़ी ? वह अपनी आखों को चालाकी के साथ मटकाते हुए मुझसे एकाएक पूछ बैठा।

"क्यों, क्या ऐसी कोई खास बात देखने की थी ?" मैंने उससे पूछा।

पूनिन ने अपने कंधे की तरफ देखा, मानो वह इस बात से आश्वस्त हो जाना चाहता हो कि कोई उसकी बात को सुन तो नहीं रहा है। "हम लोगों की सुकुमारी सुंदरी मानसी बहुत शीघ्र बधू बनने जा रही है।"

"सो कैसे?"

"श्रीमती बैबूरिन।" पूनिन ने कोशिश करके इन शब्दों का उच्चारण किया और फिर अपने खुले हुए हाथों से घुटनों पर बार-बार थपकी देतु हुए एक चीनी अफसर की तरह अपने सिर को हिलाया।

"असंभव।" कृत्रिम आश्चर्य प्रकट करते हुए मैंने जोर से कहा। पूनिन का सिर धीरे-धीरे स्थिर हो चला और उसके हाथ नीचे गिर आये। "असंभव क्यों ? क्या यह मैं पूछ सकता हूं ?"

"क्योंकि बैबूरिन उस नवयुवती का पिता होने योग्य है; क्योंकि दोनों की उम्र में जो फर्क है, उसके कारण बालिका की ओर से प्रेम की संभावना बिल्कुल नहीं रह जाती।"

"बिल्कुल नहीं रह जाती।" पूनिन ने उत्तेजित स्वर में इस वाक्य को दुहराया, "किन्तु कृतज्ञता, विशुद्ध प्रेम, कोमल भावना, क्या ये सब कुछ भी नहीं हैं ? प्रेम की संभावना बिल्कुल नहीं रह जाती ? जरा इस बात पर भी तो गौर करो। माना कि मानसी एक बहुत ही अच्छी लड़की है, किन्तु बैबूरिन का स्नेहभाजन बनना, उसके सुख का साधन बनना, उसके जीवन का आधार बनना-सारांश यह कि उसकी अर्द्धांगिनी बनना उसकी जैसी लड़की के लिए भी क्या महत्तम संभवनीय आनंद का विषय नहीं है ? और वह खुद इस बात को अच्छी तरह समझती है। तुम स्वयं ही ध्यानपूर्वक उसकी तरफ दृष्टि डालकर देख लो न ! बैबूरिन की उपस्थिति में मानसी उसके प्रति कैसी श्रद्धालु, कंपायमान तथा आवेशपूर्ण हो जाती है।"

"यही तो खराबी है, पूनिन ! जैसा कि तुम कहते हो कि वह कंपायमान हो जाती है। अगर तुम किसी को प्यार करते हो तो उसके सामने कांपते थोड़े ही हो।"

"किन्तु तुम्हारी इस बात से मैं सहमत नहीं हो सकता। मेरा ही दृष्टान्त लो न। मुझसे बढ़कर बैबूरिन को कोई प्यार नहीं करता, किन्तु मैं उसकी उपस्थिति में कांपने लगता हूं।"

"वाह, अच्छी कही ! तुम्हारी बात दूसरी है।"

"दूसरी कैसे ?"

"कैसे ? किस तरह ?" पूनिन बीच में ही बोल उठा। मैं उस समय उसके भाव को ताड़ नहीं सका। वह गरम हो उठा था, यहां तक कि क्रुद्ध भी हो चला था और उसकी बोली में भी पहले जैसी संगीत-ध्वनि नहीं रह गई थी।

"नहीं," उसने कहा, "मैं देखता हूं कि तुममें मानव चरित्र परखने योग्य दृष्टि नहीं है। तुम लोगों के हृदय की बात भी नहीं जान सकते।"

मैंने उसके कथन का खंडन करना छोड़ दिया...और बातचीत के रूख को बदल देने के खयाल से यह प्रस्ताव किया कि पुराने समय की बात याद करके हम दोनों को साथ मिलकर कुछ पढ़ना चाहिए।

पूनिन कुछ क्षणों तक मौन रहा। आखिर उसने पूछा, "प्राचीन कवियों में से ? यथार्थवादी कवियों में से ?"

"नहीं, एक नये कवि की।"

"नये कवि की ?" पूनिन ने अविश्वास सूचक भाव में दुहराया।

"पुश्किन," मैंने जवाब दिया। मुझे अचानक 'जिप्सी' की याद आ गई, जिसके बारे में कुछ ही दिन पहले टारहोव ने मुझसे कहा था। उसमें एक गीत बूढ़े पति के संबंध में है। पूनिन कुछ कुड़कुड़ाया, लेकिन मैंने उसे सोफा पर बिठला दिया, जिससे वह आराम के साथ ध्यानपूर्वक सुन सके। फिर इसके बाद मैंने पुश्किन की कविता पढ़नी शुरू की। आखिर उसमें वह पद भी आ गया-

बाबा कहलाये जाने पर मिटी न जिन के मन की चाह।

बासी कढ़ी उबल आई है, देखो इस बूढ़े का ब्याह।

पूनिन ने उस गीत को अन्त तक सुना और फिर एकाएक आवेश में आकर खड़ा हो गया।

"मैं यह नहीं सुन सकता"-उसने इतने गंभीर आवेश में आकर कहा कि उसके इस कथन का मुझ पर भी प्रभाव पड़े बिना न रहा। "माफ करो, मैं उस कवि की कविता अब अधिक नहीं सुन सकता। वह एक नीतिभ्रष्ट निंदक है। वह एक मिथ्यावादी है।...उससे मैं घबरा उठता हूं। मैं यह नहीं सुन सकता। अच्छा, बस मुझे जाने दो।"

पूनिन कुछ देर और ठहरे, इसके लिए मैं उसे समझाने-बुझाने की कोशिश करने लगा, किन्तु उसने अपनी जिद पर डटे रहने का आग्रह दिखलाया। उसने बार-बार इस बात को दुहराया-"मुझे घबराहट मालूम हो रही है और मैं ताजी हवा में जाकर सांस लेना चाहता हूं।" उसके होंठ बराबर धीमे-धीमे कांप रहे थे और वह अपनी आंखों को मुझसे चुरा रहा था, मानो मैंने उसके दिल पर चोट पहुंचाई हो। आखिर वह चला गया। कुछ समय के बाद मैं भी घर से बाहर निकलकर टारहोव से मुलाकात करने के लिए चल पड़ा।

बिना किसी प्रकार के शिष्टाचार के, बिना किसी से कुछ पूछे, जैसी कि विद्यार्थियों की आदत हुआ करती है, मैं सीधे उसके घर में दाखिल हो गया। पहले कमरे में कोई भी आदमी न था। मैंने टारहोव का नाम लेकर पुकारा और उसका कोई उत्तर न पाकर वापस लौटना ही चाहता था कि इतने में पास के एक कमरे का दरवाजा खुला और टारहोव उपस्थित हुआ। उसने अजीब ढंग से मेरी ओर देखा और बिना कुछ बोले ही मुझसे हाथ मिलाया। पूनिन से मैंने जो कुछ सुना था, वह सब उसे बतलाने के लिए आया था। यद्यपि मुझे तुरंत यह मालूम हो गया कि

टारहोव से मिलने का मैंने ठीक मौका नहीं चुना था, तथापि थोड़ी देर तक इधर-उधर की बातें करने के बाद आखिर मैंने उसे मानसी के संबंध में बैबूरिन की आकांक्षाएं बतला दीं। इस खबर को सुनकर प्रत्यक्ष रूप में वह अधिक विस्मित नहीं जान पड़ा। वह चुपचाप मेज के पास बैठ गया और अपनी आंखों को मेरी तरफ गड़ाये हुए और पहले के समान ही मौन भाव में उसने ऐसे भाव जाहिर किये, मानो वह कहना चाहता हो, "अच्छा, और तुम्हें क्या कहना है ? जो तुम्हारे ख्याल हों, उन्हें कह डालो।"

मैं गौर के साथ उसके चेहरे की तरफ देखने लगा। उसमें मुझे उत्कंठा, कुछ व्यंग तथा किंचित अहंकार का भाव दीख पड़ा, किन्तु इससे मुझे अपने विचारों को प्रकट करने में कोई रुकावट नहीं हुई। इसके विपरीत उसके संबंध में मेरे मन में यही खयाल पैदा हुआ, "तुम अपनी शान दिखला रहे हो, इसलिए मैं तुम्हें छोडूंगा नहीं।" मैंने उसे उपयुक्त उपदेश देना शुरू किया, "देखो, आवेशजनित भावनाओं के सामने झुकने में बड़ी बुराई है। प्रत्येक आदमी का यह कर्तव्य है कि वह दूसरे आदमी की स्वतंत्रता तथा व्यक्तिगत जीवन के प्रति आदर-भाव रखे। इत्यादि।" इस प्रकार कहते हुए मैं बेतकुल्लफी के खयाल से कमरे में इधर-उधर घूमने लगा।

टारहोव ने न तो मुझे बीच में टोका, और न वह अपनी जगह से टस-से-मस हुआ। वह सिर्फ अपनी ठुड्डी पर अंगुलियों को दौड़ा रहा था।

"मैं जानता हूं," मैंने कहा...(मेरे इस कथन का ठीक उद्देश्य क्या था, इसकी मुझे भी कोई स्पष्ट जानकारी न थी- बहुत संभव है कि वह ईर्ष्या हो। किन्तु इतना तो जरूर था कि वह नीतिनिष्ठा नहीं थी।) "मैं जानता हूं"-मैंने कहा, "कि यह आसान नहीं है। यह हंसी की बात नहीं है। मुझे निश्चय है कि तुम मानसी को प्यार करते हो। और मानसी तुम्हें प्यार करती है। यह तुम्हारे लिए यों ही कोई क्षणिक उमंग नहीं है, किन्तु देखो, यदि हम यह मान लें। (यहां मैंने अपने हाथों को मोड़कर छाती पर रखा)...हम यह मान लें कि तुम वासना को तृप्त भी कर लो तो इससे क्या होगा ? तुम उसके साथ शादी नहीं करोगे, यह तुम खुद भी जानते हो, किन्तु अपनी इस कार्यवाही से तुम एक अत्युत्तम, ईमानदार और उसके उपकारी व्यक्ति के सुख का सर्वनाश कर रहे हो...और कौन जानता है... (यहां मेरे चेहरे से एक साथ ही सुतीक्षणता एवं चिन्ता का भाव व्यक्त होने लगा)...कि शायद मानसी के निजी सुख का भी..."

इसी प्रकार मैं कहता चला गया।

प्राय: पंद्रह मिनट तक मेरे इस कथन का प्रवाह जारी रहा। टारहोव अब भी मौन था। मैं उसके मौन पर घबराने लगा। मैं समय-समय पर उसकी ओर देख लिया करता था, किन्तु इसका अभिप्राय नहीं था कि मुझे इस बात का संतोष हो जाय कि मेरे शब्दों का उस पर प्रभाव पड़ रहा है, बल्कि यह जानने का था कि उसने क्यों मेरे कथन पर न तो कुछ उज्र ही किया और न अपनी सहमति प्रकट की, बल्कि एक गूंगे और बहरे व्यक्ति की तरह चुपचाप बैठा रहा। आखिर मुझे यह अनुमान हुआ कि उसके चेहरे पर परिवर्तन का लक्षण दृष्टिगोचर हो रहा है। उससे बेचैनी और दु:खद विक्षोभ के चिन्ह परिलक्षित होने लगे, फिर भी आश्चर्य की बात तो यह भी कि...वह उत्कण्ठा, वह प्रकाश, वह हंसती हुई-सी कोई वस्तु, जो, मुझे प्रथम बार टारहोव की ओर दृष्टिपात करने पर दीख पड़ी थी, इस समय भी उसके विक्षुब्ध एवं विषण्ण मुखमंडल पर विद्यमान थी।

मैं यह निश्चय नहीं कर सका कि अपने उपदेश की सफलता पर अपने को बधाई दूं, या नहीं, जबकि टारहोव एकाएक उठ खड़ा हुआ और मेरे दोनों हाथों को दबाकर जल्दी-जल्दी बोलते हुए मुझसे कहा, "धन्यवाद,, तुम्हें धन्यवाद ! तुम्हारा कहना बिल्कुल ठीक है,... यद्यपि दूसरे पक्ष में यह भी प्रश्न हो सकता है कि...आखिर बैबूरिन, जिसके विषय में तुम इतनी डींग मारते हो, है क्या चीज? वह एक ईमानदार मूर्ख के सिवा और कुछ भी नहीं है। तुम उसे प्रजातंत्रवादी कहते हो, किन्तु है वह महज मूर्ख। बस, वह जो कुछ है, यही। उसके सारे प्रजातंत्रवाद का अर्थ यही है कि उसकी कभी कहीं गुजर नहीं हो सकती !"

"आह! यही तुम्हारा ख्याल है! एक मूर्ख की कभी गुजर नहीं हो सकती ? किन्तु मैं तुमसे कहूंगा"-मैंने कुछ गरम होकर कहना शुरू किया, मेरे प्यारे ब्लाडीमीर निकोलेच, मैं तुमसे यह कहूंगा कि इस जमाने में कहीं भी गुजर न होना एक उत्तम और उदार प्रकृति का लक्षण समझा जाता है। जो लोग बेकार होते हैं, जो बुरे होते हैं, वही जहां-तहां अपनी गुजर कर लेते हैं और अपने को प्रत्येक परिस्थिति के अनुकूल बना लेते है। तुम कहते हो कि बैबूरिन एक ईमानदार मूर्ख है। क्यों, तब क्या तुम्हारी समझ से बेईमान और चालाक होना उससे अच्छा है ?"

"तुम तो मेरे शब्दों को तोड़-मरोड़कर दूसरी ही अर्थ निकालते हो !" टारहोव जोर से बोला, "मैं सिर्फ यह कहना चाहता था कि मैं उस आदमी को किस रूप में समझता हूं। क्या तुम मानते हो कि वह एक अनुपम व्यक्ति है ? कदापि नहीं। मुझे उसके जैसे आदमी अपने जीवन में बहुत से मिले हैं । वह अपने चेहरे को जरा गंभीर, मौन, हठी और वक्र बनाकर बैठा रहता है...अहा-हा-हा! बस, तुम कहोगे कि उसके अंदर बहुत कुछ है, किंतु दरअसल उसमें कुछ भी नहीं है, उसके दिमाग में एक भी विचार नहीं है। जो कुछ है, वह सिर्फ आत्म-प्रतिष्ठा का ख्याल है।"

"अगर आत्म-प्रतिष्ठा के अलावा और कुछ न भी हो तो भी वह एक सम्मान जनक वस्तु है।" मैं बोल उठा, "किन्तु यह तो बतलाओ कि तुम्हें उसके चरित्र का इस प्रकार अध्ययन करने का अवसर कहां मिला? तुम तो उसे जानते भी नहीं। क्यों ? या मानसी ने तुमसे उसके बारे में जो कुछ कहा है, उसके आधार पर तुम उसका वर्णन करते हो ?"

टारहोव ने अपने कंधे को हिलाया। "मानसी और मैं ! हम दोनों में बातचीत करने के लिए और ही विषय हैं। मैं तुमसे यह कहता हूं" इतना कहते समय उसका सम्पूर्ण शरीर अधीरता के कारण कांप उठा, "मैं तुमसे कहता हूं कि अगर बैबूरिन इतने भले और ईमानदार स्वभाव का है तो वह क्योंकर यह नहीं देख पाता कि मानसी उसके उपयुक्त जोड़ी नहीं है ? इन दो बातों में एक बात हो सकती है या तो वह जानता है कि वह उसके साथ जो कुछ कर रहा है, वह कृतज्ञता के नाम पर एक प्रकार का अत्याचार है...और यदि ऐसा ही हो तो फिर उसकी ईमानदारी कहां रही ? या वह जो कुछ कर रहा है, उसे अच्छी तरह समझ नहीं पाता इस हालत में उसे मूर्ख के सिवा और कह ही क्या सकते हैं ?"

मैं जवाब देना ही चाहता था, किन्तु टारहोव ने फिर मेरे हाथों को जोर से पकड़ लिया और तेजी से कहना शुरू किया, "यद्यपि...अवश्य...मैं यह स्वीकार करता हूं कि तुम्हारा कहना ठीक है, सहस्रों बार ठीक है। ...तुम मेरे एक सच्चे दोस्त हो...किन्तु अब मुझे कृपया अकेले छोड़ दो।"

मैं हैरत में पड़ गया। "तुम्हें अकेला छोड़ दूं ?"

"हां, जरूर मुझे अकेला छोड़ दो। क्या तुम देखते नहीं, अभी-अभी तुमने जो कुछ कहा है, उस पर अच्छी तरह विचार करने दो... मुझे इसमें शक नहीं कि तुम्हारा कहना दुरूस्त है, किन्तु अब मुझे अकेले रहने दो।"

"तुम इस समय उत्तेजित अवस्था में हो..." मैंने कहना शुरू किया।

"उत्तेजना ? मैं ?" टारहोव हंस पड़ा, किन्तु फौरन ही उसने अपने को संभाल लिया, "हां, जरूर मैं उत्तेजित हूं। उत्तेजित मैं होता नहीं तो क्योंकर ? तुम खुद ही कहते हो कि यह कोई हंसी की बात नहीं है। हां, मुझे इस संबंध में अकेले ही विचार करना चाहिए।" वह अब तक मेरे हाथों को दबा रहा था। "अच्छा, मेरे प्यारे दोस्त, विदा।"

मैंने विदा होते समय उससे कहा, "अच्छा, विदा !"

वहां से चलते-चलते मैंने आखिर बार टारहोव की ओर देखा। वह प्रसन्न मालूम पड़ता था। किन्तु किस बात पर? या तो इस बात पर कि मैंने, एक सच्चे दोस्त और साथी की हैसियत से, उसे उस मार्ग के खतरे से आगाह कर दिया था, जिस पर उसने पांव रखा था-या इस बात पर कि मैं वहां से विदा हो रहा था। तमाम दिन संध्याकाल तक मेरे मस्तिष्क में नाना प्रकार के विचार चक्कर काटते रहे, जब तक कि मैंने पूनिन और बैबूरिन के मकान में प्रवेश नहीं किया। मैं उसी दिन उन लोगों से मिलने गया। मैं यह बात स्वीकार किये बिना नहीं रह सकता कि टारहोव के कुछ वाक्य मेरे अंतरतम में प्रविष्ट हो गये थे...और इस समय भी वे हमारे कानों में गूंज रहे थे।...क्या सचमुच यह संभव था कि बैबूरिन...क्या यह संभव था कि वह यह नहीं समझता हो कि मानसी उसके उपयुक्त जोड़ी नहीं ?

पर क्या यह संभव हो सकता था बैबूरिन-स्वार्थत्यागी - बैबूरिन-ईमानदार मूर्ख हो !

पूनिन जब मुझसे मिलने आया था तो उसने कहा था, "हमारे घर पर एक दिन पहले तुम्हारे आने की प्रतीक्षा की जा रही थी।" यह हो सकता है, किन्तु आज के दिन तो अवश्य ही कोई मेरे आने की आशा नहीं रखता था। मैंने सबको घर पर ही मौजूद पाया और सभी को मेरे आने पर आश्चर्य हुआ। बैबूरिन और पूनिन दोनों ही अस्वस्थ थे। पूनिन के सिर में दर्द हो रहा था। वह एक पलंग पर अपने शरीर को सिकोड़े हुए लेटा था, उसके सिर में रूमाल बंधा हुआ था, और पेशानियों पर ककड़ी के टुकड़े रखे हुए थे। बैबूरिन पित्त की बीमारी से पीड़ित था। वह बिल्कुल पीला दिख पड़ता था। उसकी आंखों के चारो ओर गोलाकार रेखाएं पड़ गई थीं, भौंहें सिकुड़ी हुई थीं और दाढ़ी के बाल बढ़े हुए थे। वह एक दुल्हे के समान तो नही ही लगता था ! मैंने वहां से चलने की कोशिश की...किन्तु उन लोगों ने मुझे जाने नहीं दिया, और चाय पीने के लिए आग्रह किया।

संध्याकाल वहां प्रसन्नतापूर्वक नहीं बीता। यद्यपि मानसी को कोई रोग नहीं था और वह पहले जितनी संकोचशील भी नहीं थी, पर साफ तौर से वह चिढ़ी हुई और क्रुद्ध-सी दीख पड़ती थी... आखिर वह अपने को रोक नहीं सकी और मेरे हाथ में चाय का प्याला देते हुए, कान के पास सटकर जल्दी-जल्दी कहने लगी, "तुम जो चाहो सो कहो, तुम चाहे जितनी ही कोशिश करो, किन्तु उससे कोई फर्क नहीं पड़ सकता !" मैं ताज्जुब में आकर उसकी तरफ देखने लगा और मौका पाकर मैंने चुपके से उसके कान में कहा, "तुम्हारे कहने का क्या मतलब है ?"

"बताऊंगी।" उसने जवाब दिया। उसकी काली आंखे, उसकी तनी हुई भौंहों के नीचे से क्रुद्ध-भाव में चमकती हुई एक क्षण तक मेरे चेहरे पर गड़ी रहीं, फिर फौरन ही वहां से हट गई, "मेरे कहने का मतलब यह है कि आज तुमने वहां जो कुछ कहा था, वह सब मैंने सुन लिया और इन निरर्थक बातों के लिए तुम्हें धन्यवाद देती हूं, क्योंकि जैसा तुम चाहते हो, वैसा किसी भी तरह से हो नहीं सकता।"

"तुम वहां मौजूद थीं?" मेरे मुह से अनजाने यह निकल पड़ा... किन्तु इसी समय बैबूरिन का ध्यान इधर आकृष्ट हुआ और उसने हम लोगों की ओर देखा। मानसी मेरे पास से खिसक गई।

दस मिनट के बाद वह किसी तरह फिर मेरे पास आ पहुंची। उसे देखने से मालूम पड़ता था कि वह कोई साहसिक एवं भयंकर बात मुझसे कहने के लिए उत्सुक हो, मानो वह अपने संरक्षक के सामने ही, उसकी सावधान दृष्टि के नीचे ही, सिर्फ उसे संदेह नहीं हो, इतना बचाकर, उन बातों को मुझसे कह देना चाहती हो। यह तो एक जानी हुई बात है कि किसी खतरनाक खाई-खंदक के ऊपर बिल्कुल किनारे पर चलना स्त्रियों का एक प्रिय कौतुक है। "हां, मैं वहां मौजूद थी।" मानसी ने धीमे स्वर में कहा। उस समय उसकी आकृति में कोई परिवर्तन नहीं दीख पड़ता था। सिर्फ उसके नथुने कुछ-कुछ कांप रहे थे। "हां, अगर बैबूरिन मुझसे पूछ बैठे कि मैं तुम्हारे कानों में लग कर क्या कह रही हूं तो उससे इसी वक्त सारी बातें कह दूंगी। मुझे उसकी परवाह क्यों होने लगी ?"

"जरा सावधान," मैंने उससे प्रार्थना की। "मेरा सचमुच ख्याल है कि वे लोग हमें देख रहे हैं।"

"मैं तुमसे कहती हूं, मैं उनकी सारी बातें सुनने के लिए बिल्कुल तैयार हूं। फिर हमें देख ही कौन रहा है? उनमें एक तो गुड़ी-मुड़ी बीमार पड़ा है और कुछ भी नहीं सुनता, दूसरा अपने गंभीर दार्शनिक विचार में डुबा है। तुम डरो मत।" मानसी की आवाज कुछ ऊंची हो उठी और उसके गालों पर क्रमश: एक प्रकार की फीकी लाली दौड़ गई। उसके चेहरे पर यह लाली खूब फबती थी और इतनी सुंदर वह पहले कभी मालूम नहीं हुई थी। मेज को साफ करते हुए और चाय के प्याले तथा तश्तरी को अपने-अपने स्थान पर रखते हुए, वह कमरे में तेजी के साथ इधर-उधर घूम-फिर रही थी। उस समय ऐसा मालूम पड़ता था, मानो अपनी सहज स्वतंत्र चाल-ढाल से वह किसी को चुनौती दे रही हो। उसे देखने से प्रतीत होता था, मानो वह कह रही हो, "तुम चाहे जैसे मेरी आलोचना करो, किन्तु मैं तो अपने ढंग पर ही चलती रहूंगी और मुझे तुम्हारा कुछ डर भी नहीं है।"

मैं इस बात को छिपा नहीं सकता कि उस शाम मानसी मुझे बहुत ही आकर्षक जान पड़ी। "हां," मैंने अपने मन में सोचा, "यह एक छोटी चंडी है-यह एक नये ढंग की है...यह अनुपम है। दिल पर चोट किस तरह पहुंचाई जा सकती है, यह इन हाथों को मालूम है...किन्तु इससे क्या ? कोई हर्ज नहीं !"

"पैरेमन सेमोनिच," वह एकाएक चिल्ला उठी, "क्या प्रजातंत्र एक ऐसा साम्राज्य नहीं है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अपनी इच्छानुसार कार्य कर सके ?"

"प्रजातंत्र राज्य साम्राज्य नहीं है।" बैबूरिन ने अपने हाथों को ऊपर उठाकर, भौंहों को सिकोड़ते हुए, जवाब दिया, "वह एक प्रकार की सामाजिक संस्था है, जिसमें प्रत्येक बात कानून और न्याय पर अवलम्बित रहती है।"

"तब," मानसी कहने लगी, "प्रजातंत्र राज्य में कोई व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति पर अत्याचार नहीं कर सकता ?"

"नहीं।"

"और प्रत्येक व्यक्ति अपनी इच्छानुसार कार्य करने को स्वतंत्र है ?"

"पूर्ण स्वतंत्र ।"

"आह! यही तो मैं जानना चाहती थी।"

"तुम क्यों जानना चाहती हो ?"

"ओह, मैं चाहती थी-मैं तुमसे यही बात कहलाना चाहती थी।"

"हमारी यह नवयुवती नई बातें सीखने के लिए उत्सुक है।"-पूनिन सोफे पर बोल उठा।

जब मैं रास्ते से होकर बाहर जाने लगा तो मानसी मेरे साथ हो ली। पर उसका ऐसा करना शिष्टाचार की दृष्टि से नहीं, बल्कि उसी धूर्ततायुक्त उद्देश्य से था। उससे विदा ग्रहण करते हुए मैंने पूछा, " क्या तुम सचमुच उसे इतना अधिक प्यार कर सकती हो ?"

"उसे मैं प्यार करती हूं या नहीं, यह मेरा काम है।" उसने उत्तर दिया, "जो होना है, वह होकर ही रहेगा।"

"देखो, तुम जो कुछ करना चाहती हो, उससे सावधान हो जाओ। आग के साथ मत खेलो...वह तुम्हें जला डालेगी।"

"सर्दी से ठिठुरकर मरने की अपेक्षा जलकर मरना कहीं अच्छा है! तुम अपनी नेक सलाह अपने पास ही रखो। तुम यह कैसे कह सकते हो कि वह मेरे साथ शादी नहीं करेगा ? अथवा तुम यह कैसे जानते हो कि मैं विवाह करने की विशेष इच्छा रखती हूं ? यदि मेरा सर्वनाश हो जाय...तो इससे तुम्हें क्या ?"

मेरे बाहर होने पर उसने दरवाजा बन्द कर दिया। मुझे यह याद है, घर जाते हुए मैं कुछ प्रसन्नता के साथ यह सोचने लगा कि मेरा मित्र टारहोव अपनी इस नवीन ढंग की प्रेयसी को पाकर बड़ी विपत्ति में पड़ेगा...उसे यह सुख बहुत मंहगा पड़ेगा। पर वह इसे पाकर सुखी होगा, यह बात मैं खेदपूर्वक अनुभव कर रहा था।

इस घटना को बीते तीन दिन हो चुके थे। मैं अपने कमरे में लिखने की मेज के पास बैठा था। उस समय मैं कोई विशेष काम नहीं कर रहा था, बल्कि जलपान के लिए तैयार हो रहा था। मुझे सनसनाहट की आवाज मालूम हुई। मैंने सिर उठा कर देखा और देखते ही मेरे होश उड़ गये। मैं जड़वत् बन गया। मेरी आंखों के सामने एक कठोर, भयानक, सफेद छाया-मूर्ति खड़ी दीख पड़ी। वह पूनिन की मूर्ति थी। वह अर्द्धनिमीलित नेत्रों से मेरी ओर देख रहा था, उसकी पलकें धीरे-धीरे झपकी ले रही थीं। उसकी आंखों से निश्चेष्ट भय का भाव-वैसा ही भय, जैसा संत्रस्त खरगोश में पाया जाता है-व्यक्त हो रहा था। उसकी भुजाएं उसके दोनों बगलों में छड़ी जैसी लटक रही थीं।

"पूनिन, तुम्हें क्या हुआ है? तुम यहां कैसे आये? क्या तुम्हें किसी ने देखा नहीं? बात क्या है? बोलो न !"

"वह भाग गई।" पूनिन ने रूद्ध कंठ से बहुत ही धीमी आवाज में उत्तर दिया, जो मुश्किल से सुनाई पड़ती थी।

"यह तुम क्या कहते हो ?"

"वह भाग गई।"- उसने फिर दुहराया।

"कौन ?"

"मानसी। वह रात में ही निकल गई और एक परचा छोड़ गई है।"

"परचा ?"

"हां, उसने लिखा है-'मैं तुम्हें धन्यवाद देती हूं। मैं फिर वापस नहीं लौटूंगी। मेरी तलाश में न रहना।' हमने ऊपर-नीचे सब जगह छान डाली। रसोइये से पूछ-ताछ की, किन्तु उसे भी कुछ पता नहीं। जोर से नहीं बोल सकता। मुझे माफ करना। मेरा गला बैठ गया है।"

"मानसी तुम्हें छोड़कर चली गई!" मैंने विस्मित होकर कहा, "बड़ी मूर्ख निकली! मि. बैबूरिन तो अवश्य ही अत्यंत निराश हुए होंगे। वह अब क्या करना चाहते हैं ?"

"कुछ भी करना नहीं चाहते। मैं गवर्नर जनरल के पास जाना चाहता था, पर उन्होंने मना कर दिया। मैं पुलिस को इसकी सूचना देना चाहता था। उन्होंने उसके लिए भी मना कर दिया और बहुत नाराज हुए। वह कहते हैं, "मानसी स्वतंत्र है। मैं उसके किसी काम में बाधा नहीं देना चाहता।" वह इस हालत में भी अपने ऑफिस में काम करने गये हैं। परंतु देखने में वह जिन्दा जैसे नहीं, बल्कि मुर्दा मालूम पड़ते हैं। वह मानसी को बहुत ज्यादा प्यार करते थे...हां ! हम दोनों उसे कितना प्यार करते थे!"

इसी वक्त पूनिन को देखकर मुझे पहले-पहल यह मालूम हुआ कि वह लकड़ी की बनी हुई एक जड़ मूर्ति नहीं, बल्कि एक सजीव प्राणी है। उसने अपनी दोनों मुट्ठियों को ऊपर उठा कर अपनी खोपड़ी पर रखा, जो हाथीदांत की तरह चमक रही थी।

"कृतघ्न बालिका !" उसने आह-भरी आवाज में चिल्ला कर कहा, "किसने तुम्हें खिलाया-पिलाया-उढ़ाया-पहनाया और पाल-पोसकर बड़ा किया? किसने तुम्हारे लिए चिन्ता की और अपना सारा तन-मन प्राण तुम पर न्योछावर कर दिया... और तुमने इन सारी बातों को भुला दिया! यदि तुम मुझे छोड़ देतीं तो सचमुच वह कोई बड़ी बात न होती, पर पैरेमन सेमोनिच को ... पैरेमन..."

मैंने पूनिन से बैठ जाने और आराम करने की प्रार्थना की।

पूनिन ने अपना सिर हिलाया, "नहीं, मैं नहीं बैठूंगा। मैं तुम्हारे पास आया हूं...मैं नहीं जानता, किसलिए। मैं विक्षिप्त-सा हो रहा हूं। घर पर अकेले बैठे रहना भयानक जान पड़ता है। मैं अपने को क्या करूंगा ? मैं कमरे के बीच खड़ा होकर अपनी आंखों को मूंद लेता हूं और "मानसी !" नाम लेकर पुकारता हूं। पागल होने का यही तरीका है। मगर नहीं, मैं व्यर्थ की बातें क्यों बक रहा हूं ? मुझे मालूम है कि मैं तुम्हारे पास किसलिए आया हूं। तुमको याद होगा कि उस दिन तुमने मुझे वह महा निकृष्ट कविता पढ़कर सुनाई थी...तुम्हें यह भी स्मरण होगा कि उसमें एक वृद्ध पति का जिक्र आया है। तुमने ऐसा क्यों किया था ? क्या तुम्हें उस समय कुछ मालूम हुआ था...या तुमने कुछ अनुमान किया था ?" पूनिन ने मेरी ओर दृष्टिपात किया, "पिओटर पिट्रोविच।" वह एकाएक चिल्ला उठा और उसका सारा शरीर कांपने लगा, "तुम शायद जानते हो कि वह कहां है ? मेरे सहृदय मित्र, मुझे बताओ, वह किसके पास गई है ?"

मैं घबरा गया और मेरी आंखें नीचे की ओर झुक गईं।

"शायद अपनी चिट्ठी में उसने कुछ लिखा हो।" मैंने कहना शुरू किया।

"उसने लिखा है कि मैं आप लोगों को छोड़कर जा रही हूं, क्योंकि मै किसी और ही व्यक्ति से प्रेम करती हूं। मेरे प्यारे नेक दोस्त, तुम यह जरूर जानते हो कि वह कहां है ? उसे बचाओ, हम लोगों को वहां ले चलो। हम उसे वापस लौट आने के लिए कहेंगे। जरा सोचो तो कि वह कैसे व्यक्ति का सर्वनाश कर रही है।"

पूनिन का चेहरा एकदम लाल हो उठा। ऐसा मालूम पड़ता था, मानो उसके सिर में खून दौड़ गया हो। वह धम-से घुटनों के बल गिर पड़ा। "मित्र हमें बचाओ। हमें वहां ले चलो।"

मेरा नौकर दरवाजे पर आया और चकित होकर चुपचाप खड़ा-खड़ा यह सब दृश्य देखता रहा।

मैंने बड़ी मुश्किल से पूनिन को उठाकर खड़ा किया और उसे यह विश्वास दिलाया कि अगर इस संबंध में मुझे किसी के प्रति कुछ संदेह भी हो तो फौरन उसी दम और खासकर दोनों साथ मिलकर कुछ नहीं कर सकते, क्योंकि इससे हमारे सारे प्रयत्न निष्फल हो जायेंगे। मैंने उसे यह भी विश्वास दिलाया कि इस मामले में भरसक प्रयत्न करने के लिए मैं तैयार हूं, मगर किसी बात के लिए जवाबदेह नहीं होऊंगा। पूनिन ने मेरा विरोध नहीं किया और असल में मेरी बातों को उसने सुना भी नहीं। वह सिर्फ समय-समय पर कातर स्वर में दुहराता रहा, "उसे बचाओ, उसे और बैबूरिन को बचाओ।" आखिर वह रो पड़ा। "कम-से-कम एक बात तो बताओ।" उसने पूछा, "क्या वह सुंदर है ? नवयुवक है ?"

"हां, वह नवयुवक है।" मैंने उत्तर दिया।

"वह नवयुवक है।" पूनिन ने इस वाक्य को अपने गालों के आंसू पोंछते हुए दुहराया, "और यह युवती नई...बस, इसी से यह व्याधि खड़ी भई !"

उसके मुंह से यह छन्द-बद्ध वाक्य संयोग से निकल पड़ा, क्योंकि बेचारे पूनिन की प्रवृत्ति उस समय छन्द-रचना की ओर थोड़े ही थी। मैं एक बार फिर उसके असंबद्ध वाक्य-प्रवाह अथवा उसके मूक हास्य को ही सुनने के लिए बुहत कुछ न्योछावर कर देता किन्तु हाय! उसकी वह वक्तृत्व शक्ति सदा के लिए विलीन हो गयी और फिर मुझे उसका हास्य कभी सुनाई नहीं दिया।

मैंने उसे विदा किया कि ज्यों ही मुझे कोई बात निश्चित रूप में मालूम होगी, मैं उसे सूचित कर दूंगा। टारहोव के नाम का मैंने कोई जिक्र नहीं किया। पूनिन एकाएक बिल्कुल निस्तब्ध हो गया। "बहुत अच्छा, बहुत अच्छा, महाशय, आपको धन्यवाद।"

उसने करूणोत्पादक मुख से कहा और 'महाशय' शब्द का व्यवहार किया, जैसा उसने पहले कभी नहीं किया था, "सिर्फ एक बात का ध्यान रखना। पैरेमन सेमोनिच से कुछ भी नहीं कहना, नहीं तो वह नाराज हो जायेगा। सारांश यह कि उसने इस विषय की चर्चा की बिल्कुल मनाही कर दी है। अच्छा, महाशय, अब विदा होता हूं।"

ज्योंही वह उठा और अपनी पीठ को मेरी ओर घुमाया, मुझे यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि वह कितना दीन एवं दुर्बल हो गया है। वह दोनों पांवों से लंगड़ाकर चलता था और हरेक पग पर घूम जाता था।

"यह बुरा लक्षण है। इसका अर्थ यह है कि इसका अन्त निकट है।" मैंने सोचा।

यद्यपि मैंने पूनिन से वादा किया था कि मैं मानसी का पता लगाऊंगा और अगस्त में उसी दिन टारहोव के यहां जाने के लिए चल पड़ा, तथापि मुझे किसी बात का पता चलने की तनिक भी उम्मीद नहीं थी, क्योंकि मुझे यह निश्चय था कि या तो वह अपने घर पर मौजूद नहीं होगा और हुआ भी तो वह मुझसे मिलने से इनकार कर देगा। मेरा यह अनुमान गलत निकला। मैंने टारहोव को घर पर मौजूद पाया। वह मुझसे मिला और जो कुछ जानना चाहता था, वह सब मैंने जान लिया, लेकिन उससे कोई फायदा नहीं हुआ। ज्योंही मैंने उसके दरवाजे के चौखट को पार किया, टारहोव दृढ़तापूर्वक तेजी के साथ मुझसे मिलने आया। उस समय उसकी आंखें चमक रहीं थी और उनसे ज्योति निकल रही थी। उसका चेहरा बहुत मनोहर और कान्तिपूर्ण बन गया था। उसने दृढ़ता के साथ फुर्ती से कहा, "सुनो, पेटया, मेरे मित्र, तुम जिस काम से आये हो और तुम जो कुछ कहना चाहते हो, वह मैं समझता हूं। मगर मैं तुम्हें सावधान किये देता हूं कि अगर तुम मानसी के विषय में या उसके कार्य के संबंध में, अथवा जिस मार्ग को मैंने अपनी सहज-बुद्धि के अुनसार ग्रहण किया है, उस विषय में एक शब्द भी कहोगे तो फिर हम दोनों मित्र के रूप में नही रहेंगे। हम दोनों परिचित के रूप में भी नहीं रह जायेंगे और तब मैं तुमसे कहूंगा कि मेरे साथ एक अपरिचित व्यक्ति-जैसा व्यवहार करो।"

मैंने टारहोव पर दृष्टि डाली। वह भीतर से इस तरह कांप रहा था, मानो सितार का तार कसकर खींचा गया हो। उसके सम्पूर्ण शरीर में झनझनाहट जैसी आवाज हो रही थी। वह बड़ी मुश्किल से अपने यौवन के उच्छ्वास एवं आवेश को दबाकर रख सकता था। आनंदातिरेक के कारण वह आत्म-विभोर हो गया था-उसकी आत्मा आनंदसागर में तल्लीन हो गई थी।

"क्या यह तुम्हारा अंतिम निश्चय है ?" मैंने खेदपूर्वक पूछा।

"हा, पेटया, मेरे मित्र, यह मेरा अंतिम निश्चय है।"

"ऐसी हालत में मेरे लिए तुमसे विदा मांगने के सिवा और कुछ कहना नहीं है।"

टारहोव ने धीरे से अपनी पलकों को नीचा कर लिया। उस समय वह मारे आनंद के फूला नहीं समाता था।

"अच्छा, पेटया, विदा !" उसने कुछ-कुछ नाक से बोलते और मुस्कराते हुए तथा अपने सफेद दाँतों को दिखलाते हुए कहा।

मैं अब क्या करता ! मैंने उसे आनंदोपभोग करने के लिए छोड़ दिया। ज्योंही मैंने बाहर निकलकर दरवाजा बंद किया, कमरे का दूसरा दरवाजा भी बंद हो गया-इसे मैंने खुद अपने कानों से सुना।

दूसरे दिन मैं भरे हुए दिल से, पांव घसीटता हुआ, अपने अभागे परिचितों से मिलने के लिए उनके स्थान पर गया।

मैं मन-ही-मन यह आशा कर रहा था-मानव-प्रकृति की यह दुर्बलता है- कि वे मुझे अपने घर पर नहीं मिलेंगे, किन्तु इस बार भी मैने धोखा खाया। दोनों घर पर ही मौजूद थे। तीन दिनों के अंदर उन लोगों में जो परिवर्तन हो चुका था, वह किसी भी व्यक्ति को खटके बिना नहीं रह सकता था। पूनिन का चेहरा प्रेत जैसा सफेद और मैला-कुचैला दीख पड़ता था। वह पहले जैसा बातूनी अब बिल्कुल नहीं रह गया था। वह लापरवाही के साथ धीरे-धीरे पहले जैसे ही अस्फुट स्वर में बोला और कुछ घबराया-सा मालूम पड़ने लगा। उधर बैबूरिन संकोचशील, सिकुड़ा

हुआ-सा जान पड़ता था और इतना काला हो गया था, जितना पहले कभी नहीं था वैसे तो अच्छे-से-अच्छे मौके पर भी वह मौन रहता था, पर वह अब कभी-कभी कुछ शब्द उच्चारण करने के सिवा और कुछ नहीं बोलता था। उसके चेहरे पर पत्थर जैसी कठोरता का भाव जमा हुआ-सा मालूम पड़ता था।

मेरे लिए चुप रहना असंभव हो गया, पर मैं कहता भी तो क्या? मैंने पूनिन के कान में चुपके से कहा, "मुझे कुछ भी पता नहीं चला और मैं तुम्हें सलाह दूंगा कि उसकी कुछ भी आशा न रखो।"

पूनिन ने अपनी छोटी-छोटी फूली हुई लाल आँखों से -उसके चेहरे में सिर्फ यही लाली रह गयी थी-मेरी ओर देखा और अस्फुट स्वर में कुछ बड़बड़ाया। फिर इसके बाद वहां से लंगड़ाता हुआ चला गया। मैं पूनिन से जो कुछ कह रहा था, उसे शायद बैबूरिन अनुमान से ताड़ गया और अपने बंद होंठों को-जो इस कदर कसकर बंद थे, मानो लेई से आपस में सटे हुए हों- खोलते हुए सावधान स्वर में कहा, "महाशय, पिछली दफा जब आप हम लोगों से मिलने आये थे, उसके बाद हम लोगों के यहां एक अप्रिय घटना हो गई है। हम लोगों की नवयुवती मित्र मानसी ने हमारे साथ रहना असुविधाजनक समझकर हमें छोड़ देने का निश्चय किया है और इस संबंध में उसने हमें लिखित सूचना दे दी है। यह विचार कर कि हमें उसके ऐसा करने के इरादे में रूकावट डालने का कोई हक नहीं है, हम लोगों ने उसे अपने विचारानुसार जैसा वह सर्वोत्तम समझे, वैसा करने के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया है। हमें विश्वास है कि सुखी होगी।" अंतिम वाक्य जोड़ते हुए उसने कुछ प्रयत्न के साथ कहा, "और मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि इस विषय का अब कोई जिक्र न कीजिये, क्योंकि इस प्रकार की चर्चा व्यर्थ है और कष्टप्रद भी।"

"सो यह भी टारहोव के समान ही मुझे मानसी के संबंध में कुछ बोलने से मना करता है।" यही विचार मेरे मन में उदित हुआ और मन-ही-मन मैं इस पर आश्चर्य किये बिना न रह सका। तभी तो बैबूरिन जीनो की इतनी ज्यादा कद्र करता है। मेरी इच्छा हुई कि उस तत्व ज्ञानी के संबंध में कुछ बातें उसे बता दूं, पर मेरी जबान से कोई बात ही न निकली और यह अच्छा ही हुआ।

फिर मैं जल्द ही वहां से अपने काम पर चला गया। विदा होते समय न तो पूनिन ने और न बैबूरिन ने ही फिर से मिलने की बात की। दोनों एक ही शब्द का उच्चारण किया, "विदा!"

पूनिन ने 'टेलीग्राफ' पुस्तक-जिसे मैंने उसे ला दिया था- मुझे लौटा दी, मानो यह कहते हुए कि "मुझे अब ऐसी चीज की दरकार नहीं है।"

इसके एक सप्ताह बाद एक विचित्र घटना हुई। बसंत ऋतु का सहसा आरम्भ हो चुका था। दोपहर में अट्ठारह डिग्री तक गर्मी पहुंच चुकी थी। पृथ्वी पर चारों ओर हरियाली ही हरियाली नजर आ रही थी। मैंने भाड़े पर एक टट्टू लिया और उस पर सवार होकर शहर के बाहर पहाड़ की तरफ सैर के लिए निकल पड़ा। सड़क पर मुझे एक छोटी गाड़ी दिखाई पड़ी, जिसमें एक जोड़ा तेज घोड़े जुते हुए थे। उनके कानों तक कीचड़ भरा था, पूछें गुथी हुई थीं और गरदन तथा आगे के बालों में लाल रंग के रेशमी कपड़े लिपटे हुए थे। उनका साज शिकारियों के घोड़ों जैसा था। तांबे का मंडल और झब्बे लटक रहे थे। एक चुस्त युवक कोचवान बिना आस्तीन का नीले रंग का कोट, पीले रंग की धारीदार रेशमी कमीज और मयूर के पंखों से सजी हुई एक फेल्ट टोपी पहने हुए उन घोड़ों को हांक रहा था। उसकी बगल में शिल्पकार या वणिक श्रेणी की एक लड़की फूलदार रेशमी जाकेट पहने और बड़ा सा लम्बा रूमाल सिर में लपेटे बैठी थी। वह खुशी के मारे उछाल रही थी। कोचवान भी हंस रहा था। मैंने अपने टट्टू को एक तरफ कर लिया

और तेजी से जाती हुई उस प्रसन्न जुगल जोड़ी की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। इतने में हठात् उस युवक ने घोड़े को आवाज दी...।

तब मुझे पता लगा-अरे, यह तो टारहोव की जैसी आवाज मालूम होती है। मैं इधर-उधर देखने लगा। हां, वह टारहोव ही था-अवश्य वही था। किसानों की पोशाक पहने हुए था और उसकी बगल में मानसी के सिवा और कौन हो सकती थी ?

किन्तु उसी क्षण उनके घोड़ो ने अपनी चाल तेज की और एक मिनट के अंदर ही वे दृष्टि से ओझल हो गये। मैंने उनके पीछे टट्टू दौड़ाकर ले जाने की कोशिश की, किन्तु मेरा टट्टू बूढ़ा था, जो चलते समय एक ओर से दूसरी ओर मटककर चलता था, और अपनी चाल से चलने की अपेक्षा दौड़ाकर ले जाने में वह और भी सुस्त हो जाता था।

"प्यारे दोस्त ! खूब जी भर कर मौज कर लो ?" मैंने धीरे से बड़बड़ाकर कहा।

यहां पर मुझे यह भी बता देना चाहिए कि इस पूरे हफ्ते में मैने टारहोव को नहीं देखा था, यद्यपि मैं तीन बार उसके कमरे में गया। वह घर पर कभी नहीं रहता था। बैबूरिन और पूनिन इन दोनों में किसी से भी मेरी मुलाकात नहीं हुई। मैं उन लोगों से मिलने भी नहीं गया।

टट्टू पर सवार होकर बाहर जाने में मुझे सर्दी लग गई थी। यद्यपि मौसम बहुत गर्म था, तथापि हवा चुभती हुई-सी चल रही थी। मैं बहुत बीमार हो गया और जब चंगा हुआ तो अपनी दादी के साथ, डॉक्टर की सलाह से, स्वास्थ्य लाभ करने के लिए देहात चला गया। फिर मैं मास्को नहीं आया। शरद ऋतु में मैं पीटर्सबर्ग-विश्वविद्यालय में भर्ती हो गया।

3

1849

सात नहीं, बल्कि पूरे बारह वर्ष बीत गये और मैंने अपने जीवन के बत्तीसवें वर्ष में पदार्पण किया था। मेरी दादी को मरे हुए बहुत दिन हो गये थे। मैं पीटर्सबर्ग-गृह विभाग के एक पद पर काम करता था। टारहोव मेरी दृष्टि से दूर हो गया था। वह फौज में भर्ती होकर चला गया था और प्राय: हमेशा प्रांतों में ही रहा करता था। हम दोनों में दो बार मुलाकात हो चुकी थी, और पुराने दोस्त के रूप में दूसरे को देखकर प्रसन्न भी हुए थे, पर बातचीत में पुरानी बातों का जिक्र नहीं आया। आखिरी बार जब हम दोनों मिले थे, उस समय वह-यदि मुझे ठीक स्मरण है-एक विवाहित पुरुष बन चुका था।

गर्मी के मौसम में, एक दिन जब हवा बिल्कुल बंद थी, मैं गोरोहोवे स्ट्रीट में यों ही चक्कर लगा रहा था और अपने दफ्तर के कामों को कोस रहा था, जिसके कारण मुझे पीटर्सबर्ग में और शहर की गर्मी, दुर्गंध और धूल में रहना पड़ता था, मार्ग में मुझे एक मुर्दा मिला। वह एक टूटी-फूटी मुर्दा ढोने वाली गाड़ी पर रखा हुआ था, सिर पर लकड़ी की एक पुरानी ताबूत फटे-पुराने काले कपड़े से आधी ढकी हुई थी। ऊबड़-खाबड़ मार्ग पर चलने के कारण गाड़ी में जोर-जोर से जो झटका लगता जाता था, उससे वह ताबूत भी ऊपर-नीचे हिल-डुल रहा था। उस गाड़ी के साथ गंजे सिर वाला एक बूढ़ा आदमी जा रहा था।

मैंने उसकी ओर देखा। उसका चेहरा परिचित-सा मालूम पड़ा। उसने भी अपनी आंखे मेरी ओर कीं...अरे, यह तो बैबूरिन था।

मैंने अपनी टोपी उतार ली, उसके पास गया, अपना नाम बतलाया और उसके साथ-साथ चलने लगा।

"आप किसे दफनाने जा रहे हैं ?" मैंने पूछा।

उसने कहा, "निकेंडर विवेलिच पूनिन को !"

मुझे यह पहले ही अनुमान हो गया था कि वह इसी नाम का उच्चारण करेगा, पर फिर भी उसके मुंह से यह नाम सुनकर मेरा ह्रदय दु:खित हो उठा। दिल बैठ गया। पर मुझे इस बात की खुशी अवश्य थी कि मुझे अपने एक पुराने दोस्त के प्रति अंतिम सम्मान प्रदर्शित करने का संयोग मिल गया।

"क्या मैं आपके साथ चल सकता हूं, पेरामन सेमोनिच ?"

"जैसी आपकी मर्जी ? मैं इसके पीछे-पीछे अकेला ही जा रहा था। अब हम दो हो जायेंगे।"

एक घंटे से अधिक हम लोग चलते रहे। मेरा साथी आगे-आगे चल रहा था। चलते समय न तो उसकी आंखे ऊपर की ओर उठती थीं और न उसकी जबान ही हिलती थी। अंतिम बार जब मैंने उसे देखा था, तब से अब तक वह बिल्कुल बूढ़ा हो गया था। उसके लाल चेहरे पर झुर्रियां पड़ गई थीं और उसके बाल सफेद हो गये थे। बैबूरिन को अपने जीवन में बराबर कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था, परिश्रम और दु:ख झेलने पड़े थे, जिनके चिन्ह उसकी सम्पूर्ण आकृति से साफ दीख रहे थे। अभाव और गरीबी उसके जीवन के साथ बड़ी बेरहमी से पेश आई थीं।

अन्त्येष्टि-क्रिया समाप्त होने और पूनिन का नश्वर शरीर सदा के लिए भूमिसात हो जाने के बाद बैबूरिन दो मिनट तक उस नवनिर्मित मिट्टी के स्तूप के निकट खुले सिर और नतमस्तक खड़ा रहा, फिर उसने अपने क्षीण एवं विकृत चेहरे और शुष्क बैठी हुई आंखें मेरी ओर करके मुझे गंभीरतापूर्वक धन्यवाद दिया। इसके उपरान्त वह वहां से चलने के लिए तैयार हुआ, पर मैंने उसे रोक रखा।

"आप इस समय कहां रहते हैं, पेरामन सेमोनिच? मैं आपके घर आकर मिलना चाहता हूं। मुझे इस बात का बिल्कुल ख्याल नहीं था कि आप पीटर्सबर्ग में रहते हैं। हम दोनों अपने पुराने दिनों की याद कर सकते हैं और अपने पुराने दोस्त की चर्चा भी कर सकते हैं।"

बैबूरिन ने तत्काल मुझे जवाब नहीं दिया।

"मुझे पीटर्सबर्ग आये हुए दो वर्ष हो गये।" आखिर उसने कहा, "मैं शहर के अंतिम भाग में रहता हूं, पर यदि तुम सचमुच मेरा घर देखना चाहते हो तो आना।"

उसने अपना पता-ठिकाना मुझे देते हुए कहा, "शाम को आना। उस समय हम बराबर घर पर ही रहते हैं...हम दोनों ही रहते हैं।"

"आप दोनों कौन ?"

"मैं विवाहित हूं। मेरी पत्नी आज कुछ अस्वस्थ है। इसलिए वह नहीं आई। इस निरर्थक रस्म को पूरा करने के लिए एक आदमी ही काफी है। इन बातों पर विश्वास ही कौन करता है?"

मुझे बैबूरिन के अंतिम शब्दों पर आश्चर्य हुआ, पर मैंने कुछ भी न कहा। फिर एक गाड़ी वाले को बुलाया और बैबूरिन से उस पर सवार होकर उसके घर चलने के लिए कहा, पर उसने अस्वीकार कर दिया।

उसी दिन संध्या को मै उससे मिलने गया। मार्ग में मैं बराबर पूनिन के संबंध में ही सोचता रहा। मुझे उस समय की याद आ गई, जब मैं पहले-पहल उससे मिला था। उन दिनों वह कितना उल्लासपूर्ण और प्रसन्नचित जान पड़ता था। फिर इसके बाद मास्को आकर वह कितना संयमशील बन गया था- खासकर अंतिम बार जब मैंने उसे देखा था। और अब तो वह अपने जीवन से आखिरी हिसाब-किताब कर चुका था। इससे तो यही मालूम पड़ता है कि जीवन अपना पावना पाई-पाई चुका लेने के लिए उतारू हो जाता है। बैबूरिन विबोर्गस्की मुहल्ले के एक छोटे से घर में रहा करता था। इस मकान को देखकर मुझे उसकी मास्को की झोपड़ी की याद आ गई। पीटर्सबर्ग में वह जिस मकान में रहता था, वह उससे भी अधिक भद्दा मालूम पड़ा।

जब मैं उसके कमरे में दाखिल हुआ, वह एक कोने में अपने हाथों को घुटनों पर रखे एक कुर्सी पर बैठा था। एक मोमबत्ती मंद ज्योति से जल रही थी और उसका झुका हुआ सफेद सिर कुछ-कुछ चमक रहा था। उसने मेरे कदमों की आहट सुनी, चौंककर उठ खड़ा हुआ और मेरा इस रूप में हार्दिक स्वागत किया, जिसकी मुझे आशा न थी। कुछ मिनटों के बाद उसकी स्त्री भी वहां आ गई। मैंने फौरन पहचान लिया कि वह मानसी थी- और तब यह बात मेरी समझ में आई कि बैबूरिन ने क्यों मुझे अपने घर आने के लिए आमंत्रित किया था। वह मुझे यह दिखाना चाहता था कि आखिर उसकी चीज उसे मिल गयी। मानसी में बहुत परिवर्तन हो गया था, उसका चेहरा, उसका स्वर, उसके तौर-तरीके-सब कुछ बदले हुए से मालूम होते थे, पर सबसे बड़ा परिवर्तन जो हुआ था, वह उसकी आंखों में। पहले ऐसा मालूम पड़ता था, मानो वे द्रोहपूर्ण सुंदर आंखे जीवन्त रूप में नयनवाण चलाती हों, वे आंखे चुपके से चमक उठती थीं और उनकी वह चमक चकाचौंध पैदा करने वाली होती थी, उनके कटाक्ष चुभते से हुआ करते थे, किन्तु अब वे ही आंखे किसी वस्तु को सरल, शान्त एवं स्थिर भाव से देखा करती थीं। उनकी पुतलियों में पहले जैसी कान्ति अब नहीं रह गई थी। उसकी कोमल एवं शिथिल दृष्टि से ऐसा मालूम पड़ता था, मानो कह रही हो-"मैं अब पालतू बन गई हूं। मैं अब भली मानस हूं।" उसकी अनवरत विनीत मुस्कुराहट से भी यही भाव झलक रहा था। उसके कपड़े भी इसी भाव में द्योतक थे-भूरा रंग और उस पर छोटे-छोटे छींटे। वह मेरे पास आई और मुझसे बोली, "क्या आप मुझे पहचानते है ?" उसके इस प्रकार पूछने में कुछ भी झिझक नहीं मालूम पड़ती थी, पर इसका कारण यह नहीं था कि उसमें लज्जा-भाव नहीं रह गया था, या कि अतीत काल की उसकी स्मृति नष्ट हो चुकी थी, बल्कि इसका कारण यह था कि उसका क्षुद्र अहंभाव अब बिल्कुल नष्ट हो चुका था।

मानसी ने पूनिन के विषय में बहुत कुछ बातों कीं। वह एक समान स्वर में बातचीत करती थी और उसके उस स्वर में भी अब पहले जैसा तेज नहीं रह गया था। मुझे उससे मालूम हुआ कि पूनिन अंतिम कई वर्षों में बहुत कमजोर हो गया था और उसकी प्रकृति बालक जैसी हो गई थी। उसकी यह प्रकृति इस सीमा तक पहुंच गई थी कि यदि उसे खेलने के लिए खिलौने नहीं मिलते थे तो वह अत्यंत दु:खित हो उठता था। लोग तो यही कहा करते थे कि वह रद्दी चीजों से खिलौने बनाकर बेचा करता है, मगर असल में बात यह थी कि वह उन खिलौनों से खुद खेला करता था। कविता के लिए उसके हृदय में जो व्यसन था, वह अंत तक उसमें कायम रहा और उसे अगर कोई बात याद थी तो

वह सिर्फ कविता ही थी। मृत्यु से कई दिन पूर्व उसने रोसिएड की कुछ पंक्तियां पढ़कर सुनाई थीं। पर मुश्किल से वह उसी तरह डरा करता था, जिस तरह बच्चे हौआ से डरा करते हैं। बैबूरिन के प्रति उसकी जो अनुरक्ति थी, वह अन्त तक एक समान बनी रही। बराबर एक रूप में उसकी पूजा करता रहा और अंत काल में भी जबकि वह मृत्यु के अंधकारपूर्ण आवरण से आच्छादित हो रहा था, उसने कांपती हुई जबान में, 'उपकारकर्ता' शब्द का उच्चारण किया था। मुझे मानसी से यह भी मालूम हुआ कि मास्को की घटना के बाद भी बैबूरिन को दुर्भाग्यवश एक बार फिर सारे रूस की खाक छाननी पड़ी थी और वह लगातार एक काम से दूसरे काम पर मारा-मारा फिरता रहा। पीटर्सबर्ग में ही उसे फिर एक प्राईवेट नौकरी मिल गई थी, पर अपने मालिक से कुछ अनबन हो जाने के कारण कई दिन पहले उसने मजबूर होकर वह काम भी छोड़ दिया था। वजह यह थी कि बैबूरिन ने मजदूरों को पक्ष लेने का साहस दिखलाया था।

मानसी के शब्दों के साथ जो मुस्कुराहट बनी रहती थी, उससे चिन्तित होकर मैं सोच में पड़ गया था। उसके पति की आकृति को देखकर मेरे हृदय में जो भावना उत्पन्न हुई थी, उसे उसकी मुस्कुराहट ने बिल्कुल पक्का कर दिया था। उन दोनों को किसी प्रकार अपनी जीविका मात्र चलाने के लिए भी कठिन परिश्रम करना पड़ता था, इसमें तो कोई शक नहीं था। हम लोगों के वार्तालाप में बैबूरिन ने बहुत थोड़ा भाग लिया। वह जितना दुःखित जान पडता था, उससे कहीं अधिक व्यस्त मालूम पड़ता था। ऐसा प्रतीत होता था, मानो कोई चिन्ता उसे सता रही हो।

'पैरोमन सेमोनिच, यहां आओ।" रसोइए ने एकाएक दरवाजे पर हाजिर होकर कहा।

"क्यों, क्या है ? क्या चाहिए ?" उसने सशंकित होकर पूछा।

"यहां तो आओ।" रसोइए ने फिर जोर देते हुए अपनी बातों को दुहराया। बैबूरिन ने अपने कोट का बटन लगाया और वहां से बाहर चला गया।

जब मैं वहां मानसी के साथ अकेला रह गया तो उसने मेरी तरफ कुछ-कुछ बदली हुई दृष्टि से देखा और बदले हुए स्वर में बिना मुस्कुराहट के कहा, "पीटर पेट्रोविच, मैं नहीं जानती कि तुम अब मेरे बारे में क्या सोचते हो, पर इतना मैं अवश्य कहूंगी कि तुम्हें याद होगा कि मैं पहले क्या थी। उस समय मैं अत्याभिमानी और क्षुद्रहृदया थी। भली मानस नहीं थी। मैं सिर्फ अपने सुख के लिए जीना चाहती थी, पर मैं तुम्हें यह बता देना चाहती हूं कि जब मैं परित्यक्ता होकर इधर-उधर मारी-मारी फिर रही थी और मृत्यु की बाट जोह रही थी, या अपने इस जीवन का अंत कर डालने के लिए अपने दिल में हिम्मत लाने की चेष्टा कर रही थी, ऐसे समय में एक बार फिर मेरी मुलाकात पहले की तरह पैरोमन सेमोनिच से हुई, और उसने मुझे फिर बचा लिया। उसके मुंह से ऐसा एक शब्द भी नहीं निकला, जो मेरे दिल पर चोट पहुचावे-निंदा का या उलाहने का-एक शब्द भी नहीं। उसने मुझसे कुछ पूछा तक नहीं। मैं इस उदारतापूर्ण व्यवहार के योग्य नहीं थी, पर उसने मुझे प्यार किया और मैं उसकी पत्नी बन गई। मैं करती भी क्या ? मैं मरने में भी सफल न हुई थी और अपने इच्छानुसार जी भी नहीं सकती थी। ऐसी हालत में मैं क्या करती ? जो हो, उसकी यह दया ही थी, जिसके लिए मुझे कृतज्ञ होना चाहिए। बस, यह मेरी रामकहानी है।"

इतना कहकर वह चुप हो गई और एक क्षण के लिए मेरी ओर से उसने मुंह फेर लिया। इस समय भी उसके होंठों पर विनीत मुस्कुराहट खेल रही थी। "मेरा यह जीवन सुखकर है या नहीं, यह सवाल पूछने की जरूरत नहीं।" मुझे उसकी मुस्कुराहट में यही अर्थ छिपा हुआ जान पड़ा।

इसके बाद हम दोनों की बातचीत साधारण विषयों पर होने लगी। मानसी ने मुझसे कहा कि पूनिन एक बिल्ली भी छोड़ गया है, जिसे वह बहुत चाहता था। उसके मरने के बाद से वह बिल्ली छत के ऊपर के कमरे में चली गई है और वहीं रहा करती है और बराबर 'म्याऊं-म्याऊं' करती रहती है, मानो वह किसी को पुकार रही हो। पड़ोस के लोग उससे बहुत डरते हैं और यह सोचते हैं कि पूनिन की आत्मा बिल्ली के रूप में प्रकट हुई है।

"पैरोमन सेमोनिच किसी विषय को लेकर चिन्तित से मालूम पड़ते थे।" मैंने कहा।

"आह ! तुमने यह बात आखिर ताड़ ली ?" मानसी ने एक लम्बी सांस ली "चिन्तित होना उनके लिए अनिवार्य है। मुझे तुम्हें यह बताने की जरूरत नहीं कि पैरोमन सेमोनिच अब तक अपने सिद्धांतो पर स्थिर हैं। इस समय जो देश की दशा है, उससे तो उनके सिद्धांतो की और भी अधिक पुष्टि होती है।" (पुराने जमाने में जब वह मास्को में रहा करती थी, उस समय से अब के उसके कहने के ढंग में भिन्नता थी। उसके वाक्यों में एक प्रकार की साहित्यिक अभिरूचि-सी जान पड़ी थी) यद्यपि मैं यह नहीं जानती कि मैं आप पर विश्वास कर सकती हूँ या नहीं; और आप मेरी बातों को किस रूप में सुनेंगे।"

"आप यह क्यों ख्याल करती हैं कि आप मुझ पर विश्वास नहीं कर सकतीं ?"

"इसलिए कि आप सरकारी नौकर हैं। एक अधिकारी भी हैं।"

"तो, इससे क्या ?"

"इसका यह अर्थ है कि आप राजभक्त हैं।"

मानसी की इस सरलता पर मैं अपने मन में विस्मय करने लगा। मैंने कहा, "जो सरकार मेरे अस्तित्व तक से अवगत नहीं है, उसके प्रति मेरा क्या रूख है, इस संबंध में आपसे क्या कहूं ! पर आप अपने मन में निश्चिंत रहिये। मैं आपके साथ विश्वासघात नहीं करूंगा। जितना आप कल्पना करती हैं, उससे कहीं अधिक मैं आपके पति की भावनाओं के प्रति सहानुभूति रखता हूं।"

मानसी ने अपना सिर हिलाया।

"हां, आप ठीक कहते हैं"- उसने कुछ हिचकिचाहट के साथ कहना शुरू किया, "किन्तु देखिए, बात दरअसल यह है कि पैरोमन सेमोनिच की भावनाओं के शीघ्र ही कार्यरूप में परिणत होने की संभावना है। वे अब छिपाकर नहीं रखी जा सकतीं। हमारे ऐसे अनेक साथी हैं, जिनका अब हम परित्याग नहीं कर सकते।"- मानसी ने एकाएक इस तरह बोलना बंद कर दिया, मानो उसने अपनी जबान काट ली हो। उसके अंतिम शब्दों को सुनकर मैं चकित और कुछ-कुछ भयभीत-सा हो उठा। शायद उस समय का मेरा आंतरिक भाव मेरे चेहरे से व्यक्त हो रहा था और मानसी मेरे इस भाव को ताड़ गई थी।

जैसा कि मैं ऊपर कह चुका हूं, हम दोनों की बातचीत सन् 1849 में हुई थी। बहुत से लोगों को अब भी याद है कि वह जमाना कितना विपत्तिपूर्ण और कठिन था और सेंट पीटर्सबर्ग में किन घटनाओं द्वारा उसका निदर्शन हुआ था। बैबूरिन के चाल-चलन में, उसके सम्पूर्ण हाव-भाव में, जो कुछ विलक्षणताएं मालूम पड़ती थी, उनसे मैं खुद विस्मित हो रहा था। उसने एक बार नहीं, बल्कि दो बार सरकारी कार्रवाई के संबंध में तथा उच्च अधिकारियों के

बारे में इतनी घोर कटुता एवं घृणा से जिक्र किया था कि मैं हक्का-बक्का-सा हो गया था। एक दिन अकस्मात् बैबूरिन ने मुझसे पूछा था।

"अजी, यह तो बताइये कि आपने अपने किसानों को स्वतंत्र कर दिया या नहीं?"

मुझे बाध्य होकर यह बात स्वीकार करनी पड़ी कि मैंने अभी तक नहीं किया।

"क्यों? मैं समझता हूं, तुम्हारी दादी मर चुकी है?"

मुझे मजबूर होकर यह भी स्वीकार करनी पड़ा।

"यह बिल्कुल ठीक है कि आप रईस लोग" बैबूरिन ने धीरे से बड़बड़ाते हुए कहा, "दूसरों के हाथों से अपना मतलब निकालना, अपना उल्लू सीधा करना, खूब जानते हैं।"

उसके कमरे में सबसे स्पष्ट स्थान में वेलिन्स्की का सुप्रसिद्ध रेखाचित्र टंगा हुआ था, मेज पर बैस्टूजेब द्वारा सम्पादित पोलर स्टार, नामक पत्र की एक पुरानी जिल्द रखी थी।

रसोइए के पुकारने पर बैबूरिन बाहर चला गया। उसके बाद बहुत समय बीत जाने पर भी वह वापस नहीं लौटा। मानसी कुछ बेचैन सी-होकर बार-बार उस दरवाजे की ओर देखती थी, जिससे होकर बैबूरिन बाहर गया था। आखिर उसकी प्रतीक्षा मानसी के लिए असह्य हो उठी। वह उठ बैठी और मुझसे क्षमा याचना करते हुए उसी दरवाजे से वह भी बाहर निकल गयी। पन्द्रह मिनट के बाद वह अपने पति के साथ फिर वापस लौटी। उन दोनों ही के चेहरे से-जैसा मैंने समझा था- चिन्ता का भाव झलक रहा था, पर एकाएक बैबूरिन के चेहरे ने एक विभिन्न कटु, उन्मत जैसा भाव धारण कर लिया।

"आखिर, इसका अंत क्या होगा?" उसने एकाएक झटकती हुई सिसकती आवाज में, जो उसके लिए बिल्कुल नई बात थी, अपनी भयानक आंखों को इधर-उधर अपने चारों ओर बेचैनी के साथ दौड़ाते कहना शुरू किया, "लोग इस आशा में दिन काट रहे हैं कि शायद एक दिन अवस्था सुधर जाय और हम स्वतंत्रतापूर्वक रहते हुए स्वतंत्र वायुमंडल में स्वच्छन्दता के साथ सांस ले सकें, पर यहां तो बिल्कुल उल्टा ही नजर आता है -हर एक तरफ हालत दिन-पर-दिन बिगड़ती ही जा रही है। हम गरीबों का शोषण करके धनवानों ने हमें बिल्कुल खोखला बना डाला है। अपनी जवानी में मैंने धैर्यपूर्वक सब कुछ बर्दाश्त किया। उन्होंने...शायद...मुझे पीटा भी...हां।" उसने इतना कहा और फिर तेजी के साथ अपनी एड़ी के बल घूमकर और मेरी ओर झपट्टा-सा मारते हुए मुखातिब होकर बोला, "मेरे जैसे वृद्ध पुरूष को शारीरिक दण्ड दिया गया। हां, दूसरे अत्याचारों का मैं जिक्र नहीं करूंगा। किन्तु क्या सचमुच हमारे सामने इसके सिवा और कोई दूसरा उपाय नहीं है कि हम फिर उन पुराने दिनों की याद करें? इस समय नवयुवकों के साथ जैसा व्यवहार हो रहा है। उससे तो धैर्य की सीमा का भी अतिक्रमण हो जाता है। उससे सहनशीलता को सीमा भंग हो चुकी है। हां, जरा ठहरिये।"

मैंने बैबूरिन को इस दशा में पहले कभी नहीं देखा था। मानसी तो भय के मारे ऐसी हो रही थी कि काटो तो खून नही। बैबूरिन ने एकाएक खांसते हुए गला साफ किया फिर एक स्थान पर बैठ गया। अपनी उपस्थिति से बैबूरिन या मानसी को तंग करना अच्छा न समझकर मैंने वहां से चल देने का निश्चय किया और उन लोगों से विदा

मांगने ही जा रहा था कि एकाएक दूसरे कमरे का दरवाजा खुला और एक आदमी की शक्ल वहां दीख पड़ी। यह शक्ल उस रसोइए की नहीं थी, बल्कि बिखरे हुए बाल और भयानक चेहरे वाले एक नवयुवक की थी।

"मामला कुछ गड़बड़ है, बैबूरिन, कुछ गड़बड़ है!" उसने शीघ्रतापूर्वक कम्पित स्वर में कहा और मुझ अपरिचित व्यक्ति को वहां देखकर उसी क्षण वहां से गायब हो गया।

बैबूरिन उस नवयुवक के पीछे दौड़ा। मैंने मानसी से हाथ मिलाया और अपने हृदय में अनिष्ट की आशंका करता हुआ वहां से चल दिया।

"कल पधारिए।" मानसी ने चिन्तापूर्वक धीरे से कहा।

"अवश्य आऊंगा।" मैंने जवाब दिया।

दूसरे दिन सुबह मैं बिछौने से उठा भी नहीं था कि मेरे नौकर ने मेरे हाथ में मानसी का एक पत्र दिया। उसने लिखा था-

"प्रिय पीटर पेट्रोविच, आज रात में पुलिस पैरोमन सेमोनिच को गिरफ्तार करके ले गई है, किले में या और कही, यह मैं नहीं जानती। उन लोगों ने मुझे कुछ नहीं बताया। पुलिस ने हमारे कुल कागजातों की छानबीन कर डाली, बहुतों पर मुहर लगा दी और उन्हें अपने साथ लेती गई। हमारे पुस्तकों और पत्रों की भी यही दशा हुई है। कहते हैं, शहर में बहुत से लोग गिरफ्तार किये गये हैं। आप अनुमान कर सकते हैं कि मुझ पर इस समय कैसी बीत रही है? अच्छा ही हुआ कि निकेडर वेवोलिच पूनिन यह सब देखने के लिए जीवित नहीं रहे। बहुत ही उपयुक्त समय पर वह इस संसार से महाप्रस्थान कर गये। अब मुझे बतलाइये कि मैं इस हालत में क्या करूं? मैं अपने लिए भयभीत नहीं होती- मैं भूखी नहीं मरूंगी- किन्तु पैरोमन सेमोनिच की चिन्ता मुझे बेचैन बनाये डालती है। हमारी स्थिति के लोगों के यहां आने में अगर आपको भय नहीं मालूम हो तो यहां पधारने की कृपा कीजिये।

आपकी विश्वस्त

मानसी"

इसके आधा घंटे के बाद मैं मानसी के पास पहुंच गया।

मुझे देखकर उसने अपना हाथ आगे बढ़ाया। यद्यपि उसके मुंह से एक शब्द भी नहीं निकला, किन्तु उसके मुखमंडल पर कृतज्ञता की एक झलक दौड़ गई। आज भी वह कल की ही पोशाक पहने थी। उसके चेहरे से यह साफ-साफ जाहिर होता था कि वह रात भर बिल्कुल नहीं सोई थी। उसकी आंखें जगने के कारण लाल हो रही थीं- आंसुओं के कारण नहीं। वह फूट-फूटकर रोई नहीं थी उसकी वृत्ति भी उस समय रोने की नहीं थी। वह कुछ काम करना चाहती थीं। अपने ऊपर आई विपत्ति से संग्राम करना चाहती थी। वही पुरानी स्फूर्ति, वही शक्ति, वही दृढ़ संकल्प एक बार फिर मानसी में प्रकट हो आये थे। यद्यपि क्रोध से उसका कण्ठवरोध-सा हो रहा था, किन्तु क्रोध प्रकट करने के लिए उसे समय कहां था? बैबूरिन को किस प्रकार से बचाया जाय, इन बातें को छोड़कर वह और किसी विषय में सोच ही नहीं सकती थी। वह फौरन जाना चाहती थी, उसके छुटकारे की मांग पेश करना चाहती

थी। मगर जाय भी तो किसके पास? किसे दरखास्त दे और क्या अर्ज करे? इन्हीं विषयों पर वह बातचीत करना चाहती थी-इन्हीं के संबंध में मेरी सलाह लेना चाहती थी।

मैं उसे सान्त्वना देने लगा। धैर्य धारण करने का उसे उपदेश दिया। शुरू में तो सिवा इंतजार करने के और कुछ करना ही नहीं था और यथासंभव बैबूरिन के संबंध में पूछताछ करके पता लगाना था। इस वक्त जब मामला शुरू भी नहीं हुआ था और न उसका रंग-ढंग ही मालूम हुआ था, कोई निश्चयात्मक उपाय काम में लाना निरी मूर्खता और अज्ञानता होती। यदि मैं कोई विशेष महत्वपूर्ण तथा प्रभावशाली व्यक्ति होता तो उस अवस्था में भी मुझसे इस काम में सफलता की आशा रखनी मूर्खता होती । पर मेरे जैसा एक तुच्छ अधिकारी इस मामले में कर ही क्या सकता था? बेचारी मानसी का क्या कहना! उसके तो प्रभावशाली मित्र बिल्कुल थे ही नहीं।

इन सब बातों को स्पष्ट रूप में उससे कहना सहज नहीं था। किन्तु आखिर वह मेरे तर्क-विर्तक को समझ गई। यह बात भी उसने समझ ली कि मैंने जो यह कहा था कि इस समय सब प्रयत्न व्यर्थ होंगे, सो किसी अहंभाव से प्रेरित होकर नहीं कहा।

"लेकिन यह तो बतलाओ, मानसी" मैंने कहना शुरू किया, जब वह एक कुर्सी पर जा बैठी(अब तक तो वह खड़ी-खड़ी ही बातें कर रही थी, मानो वह बैबूरिन की सहायता के लिए फौरन रवाना हो जाना चाहती हो!) "पैरोमन सेमानिच इस उम्र में इस तरह के मामले में क्यों कर फंस गये? मुझे तो यह विश्वास है कि इसमें सिर्फ ऐसे ही नौजवान पड़े हुए हैं, जैसा एक व्यक्ति कल तुम्हें चेतावनी देने आया था"

"वे नौजवान हमारे दोस्त हैं।"-मानसी ने जोर देकर कहा। इस समय भी उसकी आंखें पहले जैसी ही चमक उठीं और तीर की तरह तेज होने लगीं। ऐसा मालूम पड़ता था, मानो उसके अन्तस्थल से कोई दृढ़ और दुर्दमनीय भाव उदित हो रहा हो। उसके इस भाव को देखकर मुझे अचानक 'एक नवीन ढंग की लड़की'- ये शब्द याद आ गये, जो टारहोव ने उसके संबंध में कभी प्रयुक्त किये थे।"जहां राजनैतिक सिद्धांत' इन दो शब्दों पर विशेष जोर लिहाज नहीं।" मानसी ने 'राजनैतिक सिद्धांत' इन दो शब्दों पर विशेष जोर दिया। उसे देखकर यह ख्याल होता था कि अपने समस्त शोक के बीच भी अपने को मेरे सामने इस नवीन अप्रत्याशित चरित्र में-एक सुसंस्कृत प्रौढ़ा स्त्री के रूप में, एक प्रजातंत्रवादी की योग्य पत्नी के रूप में-प्रदर्शित करने में उसे कुछ अप्रियता नहीं मालूम पड़ती थी। "कुछ बूढ़े आदमी ऐसे होते हैं, जिनमें नौजवानों की अपेक्षा अधिक जवानी होती है।" वह बोली-"और वे आत्म-त्याग भी अधिक कर सकते हैं। किन्तु सवाल यह नहीं है।"

"मैं समझता हुं, मानसी" मैंने कहा, "तुम बात को कुछ बढ़ाकर कह रही हो। पैरोमन सेमोनिच के चरित्र से परिचित होते हुए मुझे यह पहले ही जान लेना चाहिए था कि वह प्रत्येक सच्ची उमंग के साथ सहानुभूति रखेंगे, परन्तु इसके साथ-साथ मैंने उन्हें बराबर एक समझदार आदमी माना है। रूस में षड्यन्त्र करना कितना असंगत है, कितना अव्यावहारिक है-इसे वह अवश्य ही समझे बिना नहीं रह सकते, खासकर उनकी जैसी स्थिति है और उनका जो पेशा है।

"हां, अवश्य," मानसी कटु स्वर में मेरे कथन के बीच में ही बोल उठी, "वह एक काम करने वाले आदमी हैं, मजदूर हैं और रूस में तो केवल अमीर-उमरा ही षड्यन्त्रों में भाग ले सकते हैं, जैसा 14 दिसम्बर के षड्यन्त्र में हुआ था, यही न आपके कहने का मतलब है?"

"ऐसी हालात में आपको अब शिकायत ही किस बात की है।?" मेरे मुंह से हठात् ये शब्द निकलने वाले थे, किन्तु मैंने अपने को रोका। "क्या आप समझती हैं कि 14 दिसम्बर का परिणाम जो कुछ हुआ, वह ऐसा था कि उससे इस प्रकार के और भी प्रयत्न करने में उत्साह मिले?" मैंने जोर के साथ कहा।

मानसी ने त्यौरी बदल ली।"आपके साथ इस विषय में बात करना निरर्थक है।" उसके नीचे लटके हुए चेहरे से मुझे यही भाव परिलक्षित होने लगा।

"क्या पैरोमन सेमोनिच इस मामले में बहुत काफी फंस गये हैं?" मैंने उससे साहस करके पूछा।

मानसी ने कोई उत्तर नहीं दिया। ऊपर छत के कमरे से बिल्ली को भूखी-सी बेढंगी 'म्याऊं-म्याऊं' की आवाज सुनाई पड़ी।

मानसी चौंक उठी। "आह, यह अच्छा ही हुआ कि निकेंडर लिवेनिच पूनिन को यह सब नहीं देखना पड़ा!" उसने हताश होकर बिलखते हुए कहा, "उसने नहीं देखा कि रात के पुलिस वाले उसके उपकारकर्ता को, मेरे उपकारकर्ता को-या संभवत: संसार के सर्वश्रेष्ठ सत्यशील मनुष्य को-किस प्रकार निष्ठुरता के साथ पकड़ ले गये। उसने नहीं देखा कि पुलिस ने उस भद्र पुरूष के साथ उसकी इस अवस्था में कैसा बर्ताव किया, कितनी अशिष्टता के साथ उसे संबोधित किया, किस तरह उन्होंने उसे डांटा और उसके प्रति धमकियों का प्रयोग किया। सिर्फ इसलिए कि वह एक श्रमजीवी है! पुलिस का जो वह नौजवान अफसर था, वह भी सचमुच एक ऐसा नीतिभ्रष्ट, हृदयहीन दुष्ट मनुष्य था, जैसा मैंने अपने जीवन में कभी नहीं देखा।"

इतना कहते-कहते उसका कण्ठ रूद्ध हो गया। तेज हवा के झोके से हिलते पत्र की तरह उसका सारा शरीर कांप रहा था।

आखिर उसका बहुत समय से दबा हुआ क्रोध उमड़ पड़ा आत्मा की आकुलता पुरानी स्मृतियां आलोड़ित हो उठीं और आत्मा की आकुलता के कारण बाह्यरूप में प्रकट होने लगीं। मालूम पड़ने लगा मानो अब भी वे उसके अंतर में जीवित हैं-विस्मृति के गर्भ में अंतर्लीन नहीं हुई हैं। किन्तु उस क्षण उसे इस रूप में देखकर मेरे हृदय में जो धारणा उत्पन्न हुई, वह यह थी कि अब भी उसमें वह नया ढंग पहले जैसा बना हुआ है। अब भी उसकी प्रकृति वैसी ही भावुक एवं उमंगपूर्ण बनी हुई है। यदि उसमें कुछ अंतर हुआ है तो सिर्फ इतना ही कि इस समय जिन उमंगों से वह उद्वेलित हो रही है, वे उमंगें उसकी जवानी के दिनों जैसी नहीं हैं। उसके साथ प्रथम साक्षात में मैंने उसके जिस भाव को आत्म-समर्पण के रूप में, उसकी सुशीलता के रूप में, समझा था- जो वस्तुत: था भी वैसा ही- वह संयत कान्तिविहीन दृष्टि, वह निस्तेज वाणी, वह शान्ति, वह सरलता-ये सब अतीत की बातें थीं, जो अतीत अब फिर लौटकर नहीं आ सकता।

इस समय तो वर्तमान में जो कुछ था, वही व्यक्त हो रहा था। मैंने मानसी को सांत्वना देने की चेष्टा की, अपने वार्तालाप के विषय को व्यावहारिक रूप में ले जाने का प्रयत्न किया। मैं सोचने लगा-अब कुछ ऐसे उपाय करने चाहिए, जो इस समय अनिवार्य हों। पहले हमें यह ठीक-ठाक पता लगाना चाहिए कि बैबूरिन है कहां, उसके बाद बैबूरिन तथा मानसी के भरण-पोषण का उपाय करना चाहिए। इन सब कामों के करने में कुछ कम कठिनाई नहीं मालूम पड़ी, पर रूपया जुटाने की उतनी जरूरत नहीं थी, जितनी काम की, क्योंकि ऐसे मौकों पर काम दिलाना- जैसा हम सभी जानते हैं -बहुत जटिल समस्या होती है।

मैंने जिस समय मानसी से विदा ली, उस समय मेरे मस्तिष्क में नाना प्रकार के तर्क-विर्तक भरे हुए थे।

मुझे शीघ्र ही पता चल गया कि बैबूरिन को किले में रखा गया है।

मुकदमे की कार्यवाही शुरू हुई और वह बहुत दिनों तक चलती रही। मैं हर हफ्ते मानसी से कई बार मिला करता था। उसने अपने पति से मिलकर अनेक बार बातचीत की थी। किन्तु जिस समय इस सारी शोचनीय घटना के संबंध में निर्णय किया जा रहा था, ठीक उसी समय मैं पीटर्सबर्ग में मौजूद न था। किसी आकस्मिक घटना के कारण मुझे मजबूरन दक्षिण रूस की यात्रा करनी पड़ी थी। मुझे मालूम हुआ कि मेरी अनुपस्थिति में बैबूरिन को उस मामले में रिहाई मिल गई थी। उसके विरूद्ध जो कुछ साबित हो सका था, वह बस इतना ही कि नौजवान लोग उसे एक ऐसा व्यक्ति समझकर, जिसके प्रति किसी को कुछ संदेह नहीं हो सकता, उसके घर पर कभी-कभी सभाएं किया करते थे। यह भी उन सभाओं में उपस्थित होता था। मगर सरकार की आज्ञा से वह साइबेरिया के एक पश्चिम प्रांत में निर्वासित कर दिया गया। मानसी भी उसके साथ चली गई।

साइबेरिया से मानसी ने मुझे लिखा था, "पैरोमन सेमोनिच नहीं चाहता था कि मैं उसके साथ यहां आऊं, क्योंकि उसके विचारों के अनुसार किसी को अपने व्यक्तित्व का दूसरे के लिए बलिदान नहीं करना चाहिए। हां, अपने उद्देश्य के लिए बलिदान करना दूसरी बात है, पर मैंने उसे बताया कि इसमें बलिदान की कोई बात नहीं। जब मैंने मास्को में सबसे कहा था कि मैं उसकी पत्नी बनूंगी, उसी समय मैंने मन में निश्चय कर लिया था कि अब सदा के लिए अविच्छिन्न भाव से मैं उसकी पत्नी बनकर रहूंगी। इसलिए यह संबंध हम दोनों के अंत काल तक अटूट रहना चाहिए।"

4

1861

इस घटना को बीते बारह साल गुजर गये। रूस का हरेक आदमी जानता है और बराबर याद रखेगा कि सन् 1849 और 1861 के सालों के बीच रूस पर क्या-क्या बीती। मेरे व्यक्तिगत जीवन में भी बहुत से परिवर्तन हो गये, पर उनके संबंध में अब विशेष कुछ कहने की आवश्यकता नहीं। जीवन में बहुत सी नई बातें और नई चिंताएं आ गई। बैबूरिन ओर उसकी पत्नी उस समय मेरे विचार-क्षेत्र से अलग हो गये। बाद में तो मैं उन्हें बिल्कुल ही भूल गया। फिर भी बहुत दिनों के अंतर पर कभी कभी मेरा मानसी से पत्र व्यवहार हो जाया करता था। कभी-कभी एक-एक वर्ष से भी अधिक समय व्यतीत हो जाता, और मुझे मानसी या उसके पति का कोई समाचार नहीं मिलता था। मैंने सुना कि 1855 के बाद बैबूरिन को रूस लौटने की इजाजत मिल गई, परन्तु उसने साइबेरिया के उस छोटे शहर में ही रहना पसंद किया, जहां भाग्य ने उसे जा पटका था और जिस स्थान को उसने अपना घर जैसा बना लिया था, अपने लिए एक आश्रम एवं कार्य-क्षेत्र तैयार कर लिया था, मगर आश्चर्य की बात तो यह है कि इसके बाद ही सन् 1861 के मार्च में मुझे मानसी का निम्नलिखित पत्र मिला:

"महामान्य पीटर पेट्राविच, आपको पत्र लिखे इतने अधिक दिन बीत गये। मुझे यह भी विदित नहीं कि आप जीवित भी हैं या नहीं! यदि आप जीवित हों तो क्या आप हम लोगों के अस्तित्व के बारे में भूल नहीं गये होंगे? पर यह कोई बात नहीं है। आज मैं आपको लिखने से अपने को रोक नहीं सकती। अब तक हम दोनों पति-पत्नी के बीच सब बातें पहले जैसी चल रही हैं। पैरोमन सेमोनिच और मैं दोनों अपने-अपने स्कूलों को लेकर संलग्न रहे हैं।

उन स्कूलों की उन्नति क्रमशः हो रही है। इसके सिवा पैरामन सेमोनिच पढ़ने-लिखने में तथा अपनी आदत के अनुसार पुराने विचार के लोगों, पादरियों तथा पोलैण्ड के देश-निर्वासितों से वाद-विवाद करने में रत रहा करते हैं। उनका स्वास्थ्य भी बहुत अच्छा रहा है। मेरी तंदुरूस्ती भी ठीक रही है। किन्तु कल 19 फरवरी की घोषणा हमें प्राप्त हुई। पहले ही हमें अफवाहों से यह मालूम हो गया था कि पीटर्सबर्ग में आप लोगों के बीच क्या हो रहा है। किन्तु तो भी मैं उसका वर्णन नहीं कर सकती। आप मेरे पति को अच्छी तरह जानते हैं। दुर्भाग्यग्रस्त होने पर भी उनमें जरा भी परिवर्तन नहीं हुआ। इसके विपरीत वह पहले से भी अधिक बलिष्ठ और फुर्तीले बन गये हैं। उनकी संकल्प-दृढ़ता बहुत बढ़ी-चढ़ी है, परन्तु इतने पर भी वह अपने को नियन्त्रित नहीं कर सके। उस घोषणा को पढ़ते समय उनके हाथ कांपने लगे। इसके बाद उन्होंने तीन बार मेरा आलिंगन किया, तीन बार मेरा चुंबन लिया, फिर कुछ कहने की कोशिश की, पर कुछ कह न सके। आखिर फूट-फूट कर रोने लगे। मैं यह सब देखकर चकित हो रही थी। इतने में हठात् चिल्ला उठे,'शाबाश! शाबाश! भगवान् जार की रक्षा करे।' पीटर पेट्रोविच, ये ही उनके शब्द थे। इसके बाद कहने लगे-'हे ईश्वर! अब अपने इस सेवक को इस जीवन से छुट्टी दे दे।' फिर बोले, ' यह पहला काम है, इसके बाद और भी इसी तरह के कार्य अवश्य होंगे।' फिर नंगे सिर वह इस महत्वपूर्ण समाचार को सुनाने के लिए अपने मित्रों के पास दौड़कर गये। उस दिन घोर पाला पड़ा था और बर्फ की आंधी भी आने वाली थी। मैंन उन्हें रोकना चाहा मगर वह मेरी सुनना भी नहीं चाहते थे। जब वह घर लौटकर आये, उनका सारा शरीर, उनके बाल, उनका चेहरा, उनकी दाढ़ी- सब कुछ पाले से ढके हुए थे। उस समय उनकी दाढ़ी छाती तक बढ़ी हुई थी और उनके आंसू गालों पर जम गये थे। किन्तु वह बहुत प्रसन्न और स्फूर्तिवान दीख पड़ते थे। उन्होंने मुझसे घर की बनी हुई शराब की बोतल के लिए कहा और अपने मित्रों के साथ- जो उनके संग आये थे-जार की, समग्र रूस की तथा समस्त स्वतंत्र रूसवासियों की स्वास्थ्य कामना करते हुए उसका पान किया। इसके बाद शराब का गिलास लेकर जमीन पर दृष्टि डालते हुए उन्होंने कहा, 'निकेंडर, निकेंडर (पूनिन)! क्या तुम सुनते हो? रूस में अब गुलाम बिल्कुल ही नहीं रह गये। मेरे पुराने साथी, कब्र में आनंद मनाओ!' उन्होंने यह भी कहा कि अब इसमें कोई हेरफेर नहीं हो सकता। यह एक प्रकार का वचनदान है-प्रतिज्ञा है। मुझे उनकी सब बातें याद नहीं हैं, किन्तु बहुत दिनों के बाद इस अवसर पर मैंने उन्हें इस प्रकार प्रसन्न देखा है, इसलिए मैंने आज आपको लिखने का निश्चय किया है, जिससे आप जान जायं कि सुदूर साइबेरिया के वन-प्रान्त में भी हम लोग किस प्रकार आनंद मना रहे हैं, मगन हो रहे हैं और आप भी हम लोगों के इस आनंद में सम्मिलित हो सकें।"

यह चिट्ठी मुझे मार्च के अंत में मिली। मई मास के शुरू में मानसी की एक दूसरी चिट्ठी आई, जो बहुत ही संक्षिप्त में थी। उसने मुझे सूचित किया था कि उसके पति पैरोमन सेमोनिच बैबूरिन को ठीक उसी दिन, जिस दिन घोषणा पत्र पहुंचा था, सर्दी लग गई और 12 अप्रैल को 67 वर्ष की अवस्था में फेंफड़े के संक्रमण से उनकी मृत्यु हो गई! उसने यह भी लिखा था "जहां मेरे पति की समाधि है, वहीं मैं रहना चाहती हूं क्योंकि और उनके छोड़े हुए काम को जारी रखना चाहती हूं अपने जीवन के अवसान-काल में उन्होंने अपनी यही अंतिम इच्छा प्रकट की थी और उनकी इच्छा को पूर्ण करना ही मेरा एकमात्र धर्म है।"

इसके बाद मानसी के संबंध में कोई समाचार मुझे नहीं मिला।

समाप्त

शीर्ष पर जाएँ